ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 20 अगस्त 2017

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 20 अगस्त 2017 से 26 अगस्त 2017

भाद्र कृ.– 14 ● वि० सं०–2074 ● वर्ष 58, अंक 85, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर्य समाज विक्रमपुरा, जालन्धर, के साप्ताहिक सत्संग में हंसराज महिला महाविद्यालय की सहभागिता

आर्य समाज, विक्रमपुरा में साप्ताहिक सत्संग एवं यज्ञ का आयोजन वेद प्रचार हेतु किया गया। इसके अन्तर्गत हंसराज महिला महाविद्यालय, जालंधर की प्राचार्या डॉ. श्रीमती अजय सरीन के मार्गदर्शन में टीचिंग एवं नॉन टीचिंग सदस्यों एवं आर्य युवति सभा की छात्राओं ने सहभागिता की।

सर्वप्रथम यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें सभी उपस्थित जनों ने मन्त्रोच्चारण से सर्वमंगल की कामना की। मुख्य यजमान प्राचार्या डॉ. श्रीमती अजय सरीन सहित सभी उपस्थित आर्य बंधुओं ने आहुतियाँ डाल कर 'सर्वे भवन्तु सुखिन' की कामना की।

प्रो. प्रद्युमन तथा छात्राओं ने 'दो घड़ी ले भगवान का नाम तू', प्रस्तुत कर वातावरण को भक्तिमय बना दिया।

प्राचार्या डॉ. श्रीमती अजय सरीन ने इस सुअवसर पर उपस्थित बुजुर्ग, बहन, माताओं एवं छात्राओं का सहृदय धन्यवाद किया। उन्होंने रक्षाबंधन पर्व की सबको बधाई दी एवं आधुनिक युग में भाई–बहन के बदलते सम्बन्धों पर विचार व्यक्त करते हुए आज सम्बन्धों की रक्षा करने हेतु संकल्प करने की प्रेरणा दी। प्राचार्या जी ने प्रत्येक क्षण के महत्त्व का विचार करते हुए जीवन को प्रवाहमान रखने को कहा।

डॉ. रेखा कालिया भारद्वाज, रजिस्ट्रार डी.ए.वी. यूनिवर्सिटी एवं प्रधाना आर्य समाज विक्रमपुरा ने भी उपस्थित जनों के प्रति आभार व्यक्त किया एवं विचारों की शुद्धता पर बल देते हुए मन के विचारों को शुद्ध रखने की प्रेरणा दी।

आर्य समाज विक्रमपुरा के मंत्री प्रिंसीपल इन्द्रजीत तलवाड़ ने भी उपस्थित सर्वजन का धन्यवाद किया एवं आर्य समाज के नियमों के बारे में बताते हुए वेदों को अपने जीवन में ग्रहण करने की प्रेरणा दी। उन्होंने स्वामी दयानन्द जी के जीवन की घटनाओं से अवगत करवाते हुए उनके जैसी सादगी सजगता एवं कार्यों को जीवन में अपनाने की प्रेरणा दी। उन्होंने आत्मचिंतन करने की प्रेरणा दी।

इस अवसर पर मंच संचालन डॉ. अंजना भाटिया ने किया। शान्ति पाठ तथा लंगर द्वारा समागम का समापन किया गया।

डी.ए.वी. पुष्पांजलि में "सोपान" प्रदर्शनी

डी.ए.वी. स्कूल, पुष्पांजलि, के प्रांगण में "सोपान" नाम से एक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसमें सभी कक्षाओं के छात्र–छात्राओं ने ग्रीष्मावकाश में अपनी रुचि और विषयों पर आधारित जो रचनात्मक कार्य किया उसको प्रदर्शित किया गया। इस प्रर्दशनी की पृष्ठ भूमि को आधार दिया प्रधानाचार्य श्रीमती रश्मि राज बिस्वाल ने जिन्होंने अध्यापकों को पहले से ही नियोजित कर दिया था कि इस वर्ष जुलाई मास में जिस प्रदर्शनी की योजना है, उसे लेकर बच्चों को सामाजिक विज्ञान के सभी विषयों से जोड़ कर ग्रीष्मावकाश में रचनात्मक कार्य दें और उसी का प्रदर्शन करें।

ग्रीष्मावकाश में बच्चों ने अपनी रचनात्मक क्षमता से विभिन्न महापुरुषों के जीवन दर्शन इतिहास और साईंस आदि विषयों के जो प्रयोगात्मक विषय हैं, उन पर कार्य करके प्रर्दशनी योग्य चित्र तथा मॉडल आदि तैय्यार किये।

प्रदर्शनी के उद्घाटन पर डी.ए.वी. सी. एम.सी. के महासचिव श्री आर.एस. शर्मा, नेशनल म्यूजियम के अध्यक्ष श्री तेजपाल सिंह, विद्यालय की प्रबन्धक श्रीमती स्नेह वर्मा, प्रधानाचार्य श्रीमती रश्मिराज बिस्वाल ने प्रदर्शनी का अवलोकन किया। तदुपरान्त अभिवावक व छात्र–छात्राओं ने प्रदर्शनी का अवलोकन किया और प्रदर्शनी की भूरि–भूरि प्रशंसा की।

प्रधानाचार्या ने अन्त में प्रदर्शनी के आयोजन में सभी छात्र–छात्राओं और अध्यापक–अध्यापिकाओं द्वारा किए गए रचनात्मक और प्रयोगात्मक कार्यों की प्रशंसा की और धन्यवाद दिया।

आर्य समाज पुतलीघर (अमृतसर) की यज्ञशाला का उद्घाटन समारोह सम्पन्न

आर्य समाज मन्दिर पुतलीघर अमृतसर में नवनिर्मित यज्ञशाला का उद्घाटन समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। आर्य समाज के अन्तर्राष्ट्रीय प्रख्यात विद्वान वैदिक प्रवक्ता एवं भजन रचयिता श्रद्धेय पं. सत्यपाल "पथिक" द्वारा बडी श्रद्धा के साथ वेद मन्त्रोच्चारण कर यज्ञ करवाया गया और साथ–साथ भावार्थ भी समझाए गए। यज्ञोपरान्त श्री प्रकाश प्रेम ने सत्संग महिमा तथा श्री नरेन्द्र पन्छी ने प्रभु भक्ति का भजन प्रस्तुत किया। तत्पश्चात् श्रीमती माधुरी एवं कुमारी महक ने

मधुर कंठ से प्रभु भक्ति एवं ऋषि महिमा का सामूहिक भजन सुनाकर उपस्थित आर्यजनों को मन्त्र मुग्ध कर लिया।

यज्ञशाला का निर्माण श्रद्धेया माता जगदीश आर्या, अध्यक्षा, आर्य महिला परिषद् अमृतसर के 250000/– (ढ़ाई लाख) के आर्थिक सहयोग एवं प्रेरणा से किया गया है। पं. सत्यपाल जी "पथिक" ने अपने सम्बोधन से श्रोताओं को लाभान्वित किया।

कार्यक्रम में आर्य समाज शक्ति नगर के महामन्त्री श्री राकेश महेरा नवाकोट के प्रधान डॉ. प्रकाश, आर्य समाज लक्ष्मणसर के प्रधान प्रधान श्री इन्द्रपाल, आर्य समाज

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ९

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 20 अगस्त 2017 से 26 अगस्त 2017

अविवेकी जन डूब जाते हैं

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

भि वेना अनूषत, इयक्षन्ति प्रचेतसः।
मज्जन्त्यविचेतसः।।

ऋग् ९.६४.२१

ऋषिः **काश्यपः**। देवता **पवमानः सोमः**। छन्दः **गायत्री**।

● **(वेनाः)** प्रभु–प्रेमी मेधावी जन, **(अभि अनूषत)** अभिमुख होकर (पवमान सोम प्रभु की) स्तुति करते हैं। **(प्रचेतसः)** प्रकृष्ट चित्तवाले विवेकी जन, **(इयक्षन्ति)** यज्ञ करने का संकल्प करते हैं। **(अविचेतसः)** अविवेकी जन, **(मज्जन्ति)** डूब जाते हैं।

● सोम प्रभु पवमान हैं, जग को पवित्र करने वाले हैं। जो मलिनता संसार में कई कारणों से उत्पन्न होती है उसे विविध साधनों से पवित्र करनेवाले सोम प्रभु यदि न होते तो मलिनता इतनी बढ़ जाती कि प्राणियों का जीवित रहना कठिन हो जाता। वे मानव के हृदय को भी पवित्र करनेवाले हैं, परन्तु उन्हीं के हृदय को पवित्र कर सकते हैं जो अपना हृदय पवित्र होने के लिए उन्हें देते हैं। प्रभु–प्रेमी मेधावी जन सोम प्रभु के अभिमुख हो उनके प्रति प्रणत होते हैं, उनकी स्तुति करते हैं, उनकी पावनता का गुणगान करते हैं, उन्हें आत्म–समर्पण करते हैं। परिणामतः वे 'प्रचेताः' बन जाते हैं, उनका चित्त प्रकृष्ट, पवित्र, ज्ञानमय और विवेकयुक्त हो जाता है। 'प्रचेताः' मनुष्य दीर्घद्रष्टा होते हैं। जिस यज्ञ को अन्य लोग निरर्थक समझते हैं, उन्हें वही प्यारा होता है। वह अपने जीवन में यज्ञ करने का संकल्प लेते हैं। वे सोम–यज्ञ करते हैं, सोम प्रभु के नाम से यज्ञ में आहुतियाँ डालते हैं, 'सोम' प्रभु का भजन–कीर्तन करते हैं और उससे प्रेरणा पाकर स्वयं भी साक्षात् 'सोम' बन जाते हैं। उनके जीवन में सोम–सदृश रसमयता, मधुरता और पावनता आ जाती है। 'सोम' के आदर्श को अपने सम्मुख रखते हुए वे अन्य यज्ञों का भी आयोजन करते हैं। 'सोम' प्रभु पावनता के यज्ञ को चला रहे हैं, वे भी समाज को पावन करते हैं। 'सोम' प्रभु सृष्टि–यज्ञ चला रहे हैं, वे भी सर्जनात्मक कार्यों को करते हैं। 'सोम' प्रभु पालन–पोषण और पूर्ति का यज्ञ कर रहे हैं, वे भी निर्बलों का पालन करते हैं, अपुष्टों को पुष्टि देते हैं, अपूर्णों के दोषों को दूर कर उनके छिद्र भरते हैं। यज्ञमयी नौका पर चढ़कर वे भव–सागर से पार हो जाते है। परन्तु जो 'अविचेताः' हैं, अविवेकी हैं, अल्पदर्शी हैं, वे न 'सोम' प्रभु का स्तवन करते हैं, न यज्ञ करते हैं। परिणामतः वे भव–सागर में डूब जाते हैं और दुर्गति पाते हैं। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

अमृत-पान

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में चर्चा हो रही थी कि इस संसार में रहने वाले को जब धर्म के हरे भरे उद्यान में चलने के लिए कहा जाता है, तब जिन्होंने किनारे के ही आम चूसे हैं, वे समझते हैं कि धर्म के उद्यान में खट्टे ही आम हैं–दुःख हैं, कष्ट हैं, आपत्तियाँ ही हैं, परन्तु तनिक अन्दर तो प्रविष्ट होकर देखो, तब आनन्द ही आनन्द है।

हम संसार रूपी इस नदी में अनगिनत मेंढ़कों को साँप का शिकार होते पाते हैं, परन्तु फिर भी उसी साँप से बचने का उपाय नहीं किया जाता। वेद भगवान बताता है कि जिस व्यक्ति ने मुझे अपना सखा बना लिया, मृत्यु उसके लिए मृत्यु नहीं, अपितु जीवन है। परन्तु लोग इस घोषणा पर ध्यान नहीं देते और विषयासक्त होकर अपने जीवन को नष्ट कर रहे हैं।

आगे पढ़ेंगे दो लघु कथायें

अन्धा कौन है?

दो सुन्दर नदियों के सङ्गम, जहाँ दोनों अपनी मस्ताना चाल से चलती हुई, एक–दूसरे के गले में बाँहें डालकर एक हो जाती हैं। जिस स्थान पर मिलाप होने से पानी की तालियाँ बजने का, मन को प्रसन्न करने का शोर सुनाई देता है, उसी स्थान पर देवशर्मा अपनी धर्मपत्नी के साथ रहता था। वहाँ पर रहते हुए युग बीत गए। काले बाल श्वेत हो गए; परन्तु हाय! मन की इच्छा अभी भी पूरी नहीं हुई। घर में अँधेरा है। वृद्धावस्था आ पहुँची। सन्तान के लिए भक्ति, उपासना और प्रार्थना करते–करते अवस्था ढल गई, परन्तु कोई सन्तान उत्पन्न नहीं हुई। अन्ततः पिछली अवस्था में एक अन्धा लड़का देवशर्मा के घर उत्पन्न हुआ, जिस पर देवशर्मा ने खूब खुशियाँ मनाईं। वह अन्धा लड़का धीरे–धीरे बड़ा होने लगा। उसके पिता देवशर्मा ने उसे पढ़ाना आरम्भ किया। वह लड़का अभी बीस वर्ष का भी नहीं हुआ था कि वह बहुत–कुछ पढ़कर बुद्धिमान् बन गया। उसकी अन्दर की आँखे खुल गईं।

एक दिन वर्षा के कारण सङ्गम की नदियाँ जोरों पर थीं। शीतल हवा चल रही थी। देवशर्मा अपने अन्धे पुत्र के पास बैठा था। बातों–ही–बातों में अन्धे लड़के ने देवशर्मा से पूछा–

"क्यों पिताजी! पुरुष किस पाप के कारण अन्धा पैदा होता है?"

पिता– "जो पुरुष पहले जन्म में रत्नों की चोरी करता है, वह अगले जन्म में अन्धा होता है।"

अन्धा लड़का– पिताजी! यह बात कुछ शास्त्रोक्त प्रतीत नहीं होती, प्रत्युत बात यह है कि कारण के जो गुण होते है, वे ही कार्य के गुण शुरु करते हैं। पिताजी! क्षमा कीजिए। मैं जानता हूँ जो कारण आपके अन्धे होने का है, उसी के कारण मैं आपके घर में अन्धा ही पैदा हुआ हूँ।

पिता इस बात को सुन्दर चकित रह गया। "हैं! मैं कैसे अन्धा हूँ?" देवशर्मा को कुछ क्रोध आ गया। उसने कहा– "क्यों रे! मैं कैसे अन्धा हूँ?"

अन्धा लड़का– पिताजी, क्रुद्ध मत होओ। साक्षात् मुक्ति के देने वाला परमात्मा की भक्ति की उपासना आप पुत्र के लिए करते रहे, इसीलिए कहता हूँ कि आप भी अन्धे हैं और मैं भी अन्धा हूँ। हे पिता! इन्द्र के आसन पर बैठकर भी यदि आपने मच्छर मारा तो क्या यह आँखों वालों का काम है। पिताजी! वेदशास्त्रों को पढ़कर, उच्च शिक्षा प्राप्त करके भी एक मूत्र के कीड़े के लिए ईश्वर–भक्ति करते रहना अन्धों का ही काम है और इस काम को करने वाला ही अन्धा कहा जाता है। आपने पुत्र के लिए जन्मभर तप किया। वेद–शास्त्रों को पढ़ने के पश्चात् भी आप इसी में लगे रहे। वह पुत्र तो बिना किसी तप के पशुओं के यहाँ भी पैदा होते हैं। इस बहुमूल्य जीवन को, जिसमें आपने मुक्ति प्रापत करनी थी, जिसमें भूले–भटकों को मार्ग दिखाना था, जिसमें दुःखियों के दुःख को दूर करना था, क्या इसीलिए था कि आप एक पुत्र की प्राप्ति के लिए तपस्या में व्यतीत कर देते? इस परमात्मा की भक्ति ऐसे तुच्छ स्वार्थ के लिए करना ही आध्यात्मिक आँखों के प्रकाशरहित होने का प्रमाण देती हैं। अपने लड़के की बातें सुनकर देवशर्मा काँप उठा। सचमुच मैंने जीवन भर नष्ट कर दिया। मैं मुक्ति के बदले यह क्या माँगता रहा। खजानों के मालिक से ठीकरी की प्रार्थना करता रहा। हा! मैंने यह क्या किया?

पढ़नेवालो! सोचो क्या तुम्हारी भक्ति, पूजा, सन्ध्या भी तो कहीं ऐसी सांसारिक वस्तुओं और स्वर्ग के लिए नहीं है। यदि अब तक यह गलती करते रहे हो तो अभी बचने का प्रयत्न करो।

आग लग गई

"तुम जल रहे हो।" यह सनसनी फैलाने

शेष पृष्ठ 03 पर ☞

वेद के प्रादुर्भाव की कहानी–2

● **भद्रसेन**

यथेमा वाच कल्याणीमावदानी जनेभ्यः —

यजु. 26.2

शब्दार्थ--

यथा= जैसे, यह कितनी स्पष्ट बात है कि जनेभ्यः-- मनुष्यों के लिए, परस्पर बोलकर अपने भाव स्पष्ट करने वालों के लिए इमाम= (उच्चारण यन्त्रों से बोली जाने वाली) इस प्रस्तुत कल्याणी--म= भला करने वाली वाचम= भाषा, बोलने वाली रूपी माध्यम से भाव सप्रेषण और ज्ञान व्यवहार को सिद्ध करने वाली वेदवाणी, वेदविद्या को आवदानि= (सर्गारम्भ काल में उत्पन्न हुए प्रारम्भिक व्यक्तियों को) अच्छी प्रकार से देता हूँ, उन के अन्तःकरण में प्रेरित करता हूँ, बोलता हूँ।

व्याख्या--

यथा– सस्कृत भाषा का यह एक सामान्य नियम है कि वाक्य में यथा और तथा में से यदि एक का ही प्रयोग हुआ है तो उस वाक्य के अर्थ को स्पष्ट, सुनिश्चित करने के लिए दोनो (यथा--तथा) की पूर्ति के लिए दूसरे का अध्याहार (ऊपर से लेना) कर लिया जाता है। इस नियम के आधार पर इस वाक्य का भाव होगा– जैसे कि हम अपने चारों ओर देखते है, अपने व्यवहार में अनुभव करते हैं, कि इस संसार को रचने वाले ने हमारे कल्याण के लिए सूर्य--चाँद, जल--वायु, धरती और उससे प्राप्त होने वाले अन्न, फूल--फल, वनस्पति, खनिज--धातु आदि अनेक तरह के पदार्थ रचे हैं। वे स्पष्ट रूप से हमारा भला कर रहे हैं। उनके बिना हमारी सुखी जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। वे हमारे लिए अत्यन्त अनिवार्य हैं।

(तथा--) ठीक उसी प्रकार ईश्वर ने उन सभी पदार्थों को सही ढग से वर्तने के लिए और जीवन को ज्ञान से अधिक सुखी बनाने के लिए वेद रूपी ज्ञान दिया है। जिससे वेद की सहायता से इन भौतिक पदार्थों का और भी अच्छा उपयोग कर लाभ दिया जा सके। यह सभी अच्छी प्रकार से जानते हैं, कि हर क्षेत्र में सफल होने वालों ने या अपना और दूसरों का भला करने वालों ने कहाँ--कैसे ज्ञान द्वारा अपने जीवन को चार--चाँद लगाए हैं?

इमा वाचम= सभी मनुष्य अपनी जिह्वा, कठ, दत, ओष्ठ आदि अगों से बोलकर परस्पर भाव--संप्रेषण से सैकड़ों तरह के व्यवहार सिद्ध करते हैं। मानव जीवन में भाषा द्वारा ही हम अपने दिल की बात कहकर अनेक सामाजिक कार्य सफल करते हैं। हम अपने व्यवहार में देखते हैं, कि एक व्यक्ति जब अपनी बात दूसरों को कहता है। तभी आपस में बोल--चाल से सामाजिक जीवन चलता है। हाथ आदि के सकेतों की अपेक्षा भाषा द्वारा भावसप्रेषण बड़ी सरलता और सुनिश्चित रूप से होता है। अन्यथा इशारों से दो--चार बातें ही हो सकती हैं। यह बातचीत हम मनुष्य सुन्दर ढग से तभी कर सकते हैं जब हमें यह ज्ञान होता है, कि हमने किस को, क्या बात, कैसे कहनी है? इसीलिए एक बोलने वाला अपने वाक्य में कर्ता, कर्म, क्रिया, करण आदि बोधक शब्दों का यथावत प्रयोग करता है।

यह भाषा हम अपने पूर्वजों से सीखते हैं। फिर आगे से आगे हमारा बोलने का व्यवहार बड़ी सरलता--स्पष्टता से चलता है। अतः वाक, भाषा, बोले जाने वाले शब्द हमारे सामाजिक व्यवहार को जीवित, चलता रखने का सशक्त माध्यम है। इस सब को ध्यान में रखकर ही इमा वाच कल्याणीम्--शब्दों से वेद विशेष स्वारस्य प्रकट कर रहा है।

जनेभ्यः-- इस सार्थक भाषा का सरस--सरल--स्पष्ट--सुनिश्चित प्रयोग मनुष्यों में ही होता है। निघण्टुकार ने वेदों को बारम्बार अध्ययन करके लिखा है, कि वेदों में यत्र--तत्र--सर्वत्र मनुष्यों को पच्चीस नामों से पुकारा, संकेतित किया है। इन्हीं में से एक शब्द है-- जन। जिस का यहाँ मन्त्र में चतुर्थी विभक्ति के बहुवचन में जनेभ्यः के रूप में प्रयोग हुआ है। मन्त्र के अगले भाग में जन के भेदों को ब्रह्मराजन्य--शूद्र--अर्य--स्व--चारण के रूप में कहा है। मन्त्रों में कहीं चार वर्णों के रूप में भेद दर्शाए हैं। इस मन्त्र में उन चारों से दो अतिरिक्त हैं। तो कहीं पचक्षितयः, पचजनाः रूप में पाँच अवान्तर भेद हैं। पाँच की भी दो व्याख्याएँ मिलती हैं।

जैसे शिक्षा में रुचि, शक्ति, भेद से कोई कला, विज्ञान, तकनीकि आदि विभाग अपनाते हैं। वे सभी विद्यार्थी कहलाते हैं। ऐसे ही खेल में रुचि, क्षमता वेद से सामूहिक, वैयक्तिक आदि अनेक तरह के खेलों को भेद--उपभेदों के साथ खेला जाता है। ये सारे खिलाड़ी होते हैं। ऐसे ही मनुष्यों के एक जाति का होने पर भी कर्म, स्वभाव भेद से अवान्तर भिन्नता है। इसीलिए गीता में भी कहा है-- गुणकर्मविभागशः 4.13 स्वभावप्रभावैर्गुणः 18.41।

सस्कृत भाषा के शब्द यौगिक हैं। जो कि प्रकृति-प्रत्यय के योग से बनते हैं। अतः अपना अर्थ अपनी निर्माण प्रक्रिया के आधार पर स्वतः स्पष्ट कर देते हैं। ब्रह्म शब्द बृह धातु से बनता है, जो बड़े अर्थ में है। सबसे बड़ी वस्तु ईश्वर, ज्ञान ही है। अतः ईश्वरपारायण, ज्ञानसेवी, ज्ञान कार्य में जुटे हुए ही यहाँ ब्रह्म, ब्राह्मण के रूप में है। राजन्य= प्रशासन व्यवस्था करने वाले, तभी अराजक, अराजकता शब्द अस्त--व्यस्त स्थिति के लिए आता है। शूद्र (शू=शीघ्र, द्र=गति) अर्थात् दौड़कर कार्य करने वाले। अर्य=धन के प्रति मालिक (स्वामी) भाव रखने वाला (अर्यस्वामिवैश्ययोः पा. 3.1.103) स्व=अपनेपन की भावना से जीने वाला, गतिशील, कर्मतस्वभाव वाला।

यह वेदमन्त्र यह स्मरण करा रहा है, कि सभी मनुष्यों चाहे वे कार्य और स्वभाव भेद कैसी भी रुचि रखते हों। वे सभी ज्ञान के पात्र हैं। कम–ज्यादा के भेद से सभी ज्ञान के अभिलाषी हैं। अतः विद्या के अधिकारी हैं।

182--शालीमार नगर,
होशियारपुर -- 146001

☞ पृष्ठ 02 का शेष

अमृत–पान ...

वाला वाक्य एक सफेद दाढ़ीवाले वृद्ध ने एक नौजवान को कहा और कहना आरम्भ किया–

"देखो! तुम्हारे कान जल रहे हैं। तुम्हारी आँखें जल रही हैं, तुम्हारे हाथ और पाँव जल रहे हैं। तुम्हार हृदय से धुआँ उठता दिखाई दे रहा है। तुम्हारा सीना आग से जल रहा है। यह अग्नि दिन–प्रतिदिन तीव्र होती चली जा रही है। यद्यपि तुम इसके अस्तित्व को– इसकी हस्ती को अभी कम अनुभव करते हो, परन्तु देखो! जब यह सारी अग्नि इकट्ठी हो जाएगी, आपस में मिल जाएगी, तब इसमें से ऊँची चिंगारियाँ निकलेंगी। अग्नि भड़केगी और तुम काली राख बन जाओगे।"

युवक– मैं इस बात को समझ नहीं सका।

वृद्ध– मूर्ख लड़के! सामने देखो। छह विभिन्न स्थानों पर लकड़ियों के ढेर लगे हैं और अग्नि उन्हें जला रही है। लकड़ियों की इन छह ढेरियों पर निरन्तर ईंधन डाला जा रहा है। ढेरियाँ बढ़ती जा रही हैं। तनिक और प्रतीक्षा करो। तुम देखोगे कि ये सारी ढेरियाँ मिल जाएँगी और फिर अग्नि एक भयानक रूप धारण कर लेगी। इसकी प्रचण्ड चिंगारियाँ आकाश तक पहुँचेंगी और आस–पास की सब वस्तुओं को जला डालेंगी।

युवक– हाँ, तो फिर मेरा इससे क्या सम्बन्ध?

वृद्ध– मूर्ख! ठीक इसी प्रकार तू भी जल रहा है। तुम्हारी आँखों में आग लगी है, कानों में आग लगी है, तुम्हारी इच्छाएँ जल रही हैं। तुम्हारा दिल और सीना जल रहा है। तुम इन पृथक्–पृथक् ढेरियों पर नया ईंधन डालते हो। क्रोध, अज्ञान, घृणा, बदले की भावना और ऐसे ही अन्य विचारों को मन में लाकर तुम मन ईंधन डालते हो और इनके कारण जो दुःख, कष्ट, निराशा, हताशा होती है– उनका ईंधन डालकर तुम सीने को जला रहे हो।

सुनो! सुनो! आग भड़क रही है। ये अग्नि की ढेरियाँ दिन–प्रतिदिन बढ़ रही हैं। तुम नित नए सूर्योदय पर नया ईंधन डालते जाते हो। अब थोड़े ही समय में एक भयंकर आग जल उठेगी। इसकी ऊँची–ऊँची चिंगारियाँ सचमुच तुम्हें नष्ट कर देंगी।

युवक– उफ! उफ!! मैं जल उठा। मैं सचमुच जल उठा। क्या मेरी इस आग को बुझाने वाला कोई नहीं? क्या यह अग्नि किसी प्रकार से बुझ नहीं सकती।

वृद्ध– आग बुझ सकती है। ज्वालाएँ समाप्त हो सकती हैं, परन्तु जो ईंधन पहले पड़ चुका है, वह जलेगा और अपनी तपश पहुँचाए बिना नहीं रहेगा, परन्तु यह आग बुझ सकती है, यदि इसमें नया ईंधन न डाला जाए। आँखों के द्वार जब खुलें तब सावधान रहो कि इनमें कहीं जलाने वाली, तड़पाने वाली और भस्मसात करने वाले चित्र प्रविष्ट न हो जाएँ।

कानों के पर्दे जब एक ओर हों तो सावधान रहो कि किसी प्रकार का शीघ्र आग पकड़ लेनेवाला पदार्थ अपने अन्दर न आने पाए। अपने विचारों पर विशेष रूप से ध्यान रखो और सावधान रहो कि ये नष्ट करने वाले और आग भड़काने वाले विचारों को अपने अन्दर न ले–जाएँ। इन्हें कभी आज्ञा न दो कि ये बुराई की ओर झुकें। इसी प्रकार पाँवों को देखो कि वे चलकर कहाँ जा रहे हैं? क्या वे ऐसे स्थान पर पहुँच रहे हैं, जहाँ यह सङ्कट पैदा करने वाली आग है अथवा जहाँ अमृतमय भगवान् के उपदेशों की अमृतवर्षा हो रही है?

हाथों को देखो! ये क्या कार्य कर रहे हैं और क्या लिख रहे हैं। इसी प्रकार सारे अङ्गों–प्रत्यङ्गों और सारी इन्द्रियों की ओर से सावधान रहो। इससे संसार के आकर्षण दूर हो जाएँगे और तुम आग से पृथक् हो जाओगे। फिर तुम्हारा मन शान्त हो जाएगा। आग बुझ जाएगी और तुम इस योग्य हो जाओगे कि दूसरों की आग को भी बुझा सको। तुम परमात्मा के आनन्द को प्राप्त कर सकोगे।

.... क्रमशः

संस्कारों का प्रयोजन

● डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री

संस्कारों के नियत करने का एक मुख्य प्रयोजन यह भी है कि बच्चे की संवृद्धि और उन्नति का भार समस्त समाज के ऊपर है क्योंकि प्रत्येक मनुष्य समाज पर प्रभाव डालता है। इसलिए समाज इन संस्कारों के समय माता–पिता और गुरु के कर्तव्यों पर दृष्टि रखता है। इस जीवन में कोई विशेष परिवर्तन करना पड़ता है, अर्थात जहाँ से सड़क मुड़ती है, वहीं समस्त समाज को इकट्ठा करके साक्षी दी जाती है कि इस बालक का यहाँ तक पालन पोषण हो चुका और अब इतना और होने वाला है। यही कारण है कि समाज में वे लोग उच्च समझे जाते हैं, जिनके शास्त्रोक्त सब संस्कार समय पर होते हैं। किसी व्यक्ति का सुशिक्षित सुसंस्कृत न होना एक सामाजिक पाप है। इसका मुख्य कारण यही है कि समाज में यश पाने का कोई अधिकारी नहीं हो सकता, जब तक वह समाज की योग्यता का प्रमाण न दे दे। सम्भव है कि यूनिवर्सिटी की डिग्री प्राप्त करने के बिना भी मनुष्य अपनी विद्या–सम्बन्धी उन्नति करता रहे, परन्तु सरकार विश्वविद्यालय की उपाधि को ही प्रमाणित करती है क्योंकि विश्वविद्यालय की नियमानुसार परीक्षाएँ होती हैं। व्यक्तिगत परीक्षाएँ लेना सरकार के लिए दुस्तर ही नहीं, किन्तु असम्भव है। इसी प्रकार सम्भव है कि कोई माँ–बाप अपने बालक की दिनचर्या इस प्रकार रखें कि उससे आत्मा पर शुभ संस्कार पड़ते रहें, परन्तु समाज तो उन संस्कारों की परीक्षा उसी समय ले सकता है जब उसके सम्मुख विधिवत् यज्ञ आदि किया जाए। उस समय न केवल समाज को संस्कारित व्यक्ति की योग्यता देखने का अवसर मिलता है, किन्तु उस व्यक्ति को भी अवसर मिल जाता है वह अपने आपको समाज का अंग समझ सके और अपने ऊपर सामाजिक कर्त्तव्यों के भार का अनुभव कर सके। इसीलिए समाज जीवनरूपी सड़क के प्रत्येक मोड़ पर रेलगाड़ी=जीवन–रथ का पूरा निरीक्षण कर लेता है और आगे के लिए उचित शिक्षा देता है।

ये सामाजिक परीक्षाएँ आरम्भ में जल्दी–जल्दी होती हैं, क्योंकि आरम्भ में बालक कच्चा होता है। परन्तु ज्यों–ज्यों उसके जीवन में परिपक्वता आती जाती है, परीक्षाएँ भी देर में होती हैं। यही कारण है कि बालक की पहली पाँच–छह वर्ष की आयु में संस्कार जल्दी–जल्दी होते हैं। फिर वर्षों तक संस्कारों की आवश्यकता नहीं पड़ती। आरम्भ में जीवनरूपी सड़क में मोड़ भी बहुत होते हैं। उत्पन्न होने के समय बालक का कोई व्यक्तिवाचक नाम नहीं होता और जातिवाचक नाम से काम नहीं चलता। वस्तु और नाम, अथवा शब्द और अर्थ का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है। महाकवि कालिदास ने रघुवंश में इसी सम्बन्ध को **"वागर्थाविव संपृक्तौ"** यह कहकर दर्शाया है। नाम को संस्कृत में संज्ञा इसीलिए कहते हैं कि उसके द्वारा (सम्+ज्ञा) वस्तु का भली प्रकार ज्ञान=प्रकाश हो जाता है। इसीलिए आवश्यक है कि '**नामकरण**' संस्कार किया जाए। फिर आगे चलकर दाँत निकलने पर पालन–पोषण का प्रकार बदलता है। माता के दूध से चलकर पृथिवी माता की गोदी में, उपजे अन्न के खाने की नौबत आती है। अतः '**अन्नप्राशन**' संस्कार की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार अन्य संस्कारों को समझना चाहिए।

यहाँ एक बात स्मरण करनी चाहिए। जिनको साधारण लोकोक्ति में संस्कार कहते हैं, वे वस्तुएँ संस्कार का आरम्भ मात्र हैं, पूर्ण संस्कार नहीं। हम ऊपर भी कह चुके हैं कि यह सड़क नहीं, किन्तु स्टेशन हैं। जैसे 'अन्नप्राशन' (अन्न खाना) तो बच्चा नित्य–प्रति ही करेगा; परन्तु जिस दिन अन्न का आरम्भ हो, और जिस रीति से आरम्भ हो, उसी का नाम '**अन्नप्राशन–संस्कार**' है। '**मुण्डन–संस्कार**' का अर्थ यह है कि आज मुण्डन का विधिपूर्वक आरम्भ होता है। अत नित्य प्रति इसी प्रकार मुण्डन हुआ करेगा। '**उपनयन–संस्कार**' का अर्थ यह है कि गुरु के पास बच्चे के रहने का आज आरम्भ है, या आज से गुरु और शिष्य का सम्बन्ध रहा ही करेगा। '**वेदारम्भ–संस्कार**' (=विद्यारम्भोत्सव) में तो 'आरम्भ' शब्द स्वयं ही पड़ा हुआ है, अर्थात् आज से इसकी पढ़ाई व्रताभ्यासपूर्वक नियमित की जाती है। इसी प्रकार 'विवाह–संस्कार' का अर्थ यह है कि आज स्त्री–पुरुष के विशेष सम्बन्ध का (वि=विशेष+वाह= सम्बन्ध) आरम्भ होता है। यह विवाह अर्थात् विशेष–सम्बन्ध गृहस्थाश्रम के अन्त तक रहेगा। वस्तुतः विवाह की समाप्ति उस दिन ही नहीं हो जाती, जिस दिन सम्बन्धी–गण मंगलाशीष देकर वर–वधू को संगठित करके विदा हो जाते हैं; किन्तु वह तो विवाह=गृहस्थ जीवन का आरम्भिक दिन होता है। वस्तुतः विवाह की समाप्ति तो गृहस्थाश्रम के अन्त में होती है।

आजकल के संस्कार– आजकल आर्य हिन्दू समाज में वैदिक काल के सभी संस्कारों के चिह्न पाए जाते हैं। प्रायः पद्धतियों में भी बहुत बड़ा भेद नहीं है, यज्ञ वही, मन्त्र वही, विधि वही। परन्तु सबसे बड़ा भेद यह है कि रेल की सड़क उठा दी गई है और स्टेशन शेष रह गए हैं। जाति व समाज के अज्ञानी नेता जो रुपया सड़कों पर व्यय करना चाहिए था, वह स्टेशनों को विशाल बनाने और उनको सुसज्जित करने में व्यय कर रहे हैं। स्टेशनों के सजाने से यात्रा पूरी नहीं होती। इसी प्रकार संस्कारों के केवल रस्मोरिवाज़ को विशाल बनाने में जीवन का उद्देश्य पूरा नहीं होता। यही कारण है कि आर्य–जाति संस्कारों के चिह्न होते हुए भी अधोगति को प्राप्त हो रही है। विवाह–संस्कार आज भी प्रायः उन्हीं मन्त्रों से होता है, जिन से पुराने समय में होता था। विधि में भेद है भी, तो बहुत कम। श्रीराम और सीता अथवा श्रीकृष्ण और रुक्मणी का विवाह भी इन्हीं वेदमन्त्रों से सम्पन्न हुआ था।

परन्तु वस्तुतः देखा जाए, तो हम इस वार्त्तमानिक (आजकल हो रहे) विवाह को विवाह–संस्कार कह ही नहीं सकते। स्टेशन वह है, जहाँ पर आकर रेलगाड़ी ठहरे और जहाँ कोयला पानी लेकर आगे चलने का प्रबन्ध हो। आजकल '**विवाह–संस्कार**' एक ऐसा स्टेशन है, जहाँ पर न कोई गाड़ी आकर ठहरती है और न कहीं को जाती है। तीस–चालीस वर्ष पूर्व तो एक वर्ष के वर–वधू का विवाह, दो वर्ष के वर–वधू का विवाह, दस वर्ष की वधू के साथ पचास वर्ष के वर का विवाह, दूध–पीतों का विवाह, गोद में खेलते हुओं का विवाह, बे–दाँत के बुड्ढों का विवाह, यहाँ तक कि गर्भावस्था में ही विवाह निश्चित होता था। न **सिनीवाली** रही, न **सरस्वती** और न रहे धीमान्, श्रीमान्। अकेले वेदमन्त्र और यज्ञ तो विवाह–संस्कार नहीं बना सकते। यह तो तमाशा ही तमाशा रह गया है और इसीलिए लोगों को इस प्रकार के रस्मोरिवाज़ से घृणा होती जाती है। जब विवाह नहीं, तो **गर्भाधान–संस्कार** ही क्या होता? फिर कहीं–कहीं जो सीमन्तोन्नयन होता है, वह केवल तमाशा है। चार आदमियों को भोजन खिलाने या मिठाई बाँटने का नाम ही 'सीमन्तोन्नयन–संस्कार' रह गया है।

'**उपनयन–संस्कार**' भी हिन्दुओं में होता ही है, परन्तु किस रूप में? वही स्टेशन का सजाना और रेलगाड़ी का न होना। जो गुरु के पास रहकर शिष्य के आत्मज्ञान प्राप्त करने की प्रणाली थी, वह तो नष्ट हो गई। तमाशे के लिए कौपीन और मौञ्जी धारण की जाती है। हाथ में दण्ड–धारण कराया जाता है। लड़का भिक्षा भी माँगता है, परन्तु किसलिए? क्या गुरु की सेवा में रहकर विद्या प्राप्त करने के लिए? नहीं। माँ–बाप कह देते हैं "काशी जाने की आवश्यकता नहीं, हम यहीं विद्या पढ़ा देंगे।" जो रुपया भिक्षा में आता है, उसे घर में रख लेते हैं। रेलगाड़ी की अनुपस्थिति में सभी स्टेशन तमाशा हो जाते हैं और जीवन की विधिवत् दिनचर्या के बिना सभी संस्कार तमाशा हो जाते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है। जो माता–पिता उपनयन–संस्कार में पाँच सौ रुपए व्यय कर देते हैं, वे विद्या–प्राप्ति में जो कि उपनयन–संस्कार का वास्तविक भाग था, दो सौ रुपए खर्च करते हैं, वे वर और वधू को विवाह के योग्य बनाने में कुछ ध्यान नहीं देते। जिन घरों में बालक के 'नामकरण–संस्कार' के समय बाजे बजाने, प्रीतिभोज कराने और नाच रंग पर सैंकडों रुपए व्यय हो जाते हैं, वे घर के बालक की माता के जीवन में, जो कि गर्भस्थ बालक के लिए विशेष उपयोगी था, कुछ भी व्यय नहीं करते, या अत्यन्त अल्प व्यय करते हैं।

इस प्रकार आजकल हिन्दू–घरों के संस्कारों का वही हाल है, जो उस मूर्ख नौकर का था, जिसने अपने स्वामी से सन्दूकों की रक्षा करने का आदेश पाकर सन्दूकों से निकाल–निकाल कर वस्त्र उनके ऊपर लपेटने आरम्भ कर दिए। जिस प्रकार स्वामी का उद्देश्य सन्दूकों की रक्षा से केवल वस्त्रों की रक्षा था, इसी प्रकार शास्त्रों का उद्देश्य संस्कारों से जीवनचर्या का सुधारमात्र था। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने संस्कारों में पुनरुत्थान का मुख्य उद्देश्य जीवन–सुधार बताया है। इसीलिए उन्होंने अपनी रचित 'संस्कारविधि' में यत्र–तत्र प्रत्येक संस्कार के आरम्भ में उद्देश्य भी लिख दिए हैं। उनके अनुयायी आर्यसमाजियों को भी ध्यान रखना चाहिए कि ये संस्कार बिगड़कर कहीं वही रूप धारण न कर लें, जो आजकल सामान्य हिन्दू परिवारों में हो गया है।

तात्पर्य यह है कि जब तक जीवनचर्या ठीक नहीं होती, संस्कार उच्च पदों से गिरकर रस्मोरिवाज़ मात्र रह जाते हैं, और उनसे लाभ के स्थान में हानि होने लगती है। उदाहरण के लिए यदि 12 वर्ष के वर का 10 वर्ष की वधू से विवाह हो और स्वामी जी के बताए हुए संस्कारविधि के प्रत्येक कृत्य का पालन किया जाए, तो ऐसे विवाह को वैदिक विवाह कहना महर्षि, आर्यसमाज और वैदिक रीति का उपहासमात्र होगा। इसी प्रकार उचित आयु में उपनयन और वेदारम्भ संस्कार कराकर, यदि आर्य बालक को 'कॉन्वेण्ट' में ही दाखिल कराना है, तो यह भी महर्षि और आर्यसमाज के नाम को बट्टा लगाना ही है।

यहाँ एक प्रश्न उठ सकता है। लोग कह सकते हैं कि जब तुम यज्ञ मन्त्रोच्चारण आदि विधि को गौण और जीवनचर्या को ही मुख्य मानते हो, तो इन रस्मोरिवाज़ को उड़ाकर केवल जीवनचर्या के नियमों पर ही क्यों नहीं बल देते? तुम्हारे कथनानुसार यह प्रतीत होता है कि यदि काबुल का एक पठान युवा अवस्था में पूर्ण यौवन को प्राप्त होकर अपने समान पूर्ण युवती से विवाह करता है, तो उसका यह वैदिक विवाह है। इसी प्रकार जो लोग बिना यज्ञ आदि का आडम्बर रचाए विद्योपार्जन करते हैं, वे उन लोगों की अपेक्षा अधिक उपनयन संस्कार से संस्कारित समझे जा सकते हैं, जो मन्त्र पूर्वक यज्ञ आदि ढोंग को तो रचा लेते हैं, परन्तु विद्या की प्राप्ति नहीं करते।

शेष पृष्ठ 06 पर ☞

खड़े तिराहे पर श्रीमान् अपना पन्थ रहे पहचान

● देवनारायण भारद्वाज

चेतन भगत प्रसिद्ध लेखक एवं फिल्म पटकथा–रचनाकार दिल्ली से कानपुर तक की यात्रा बुधवार 20 जुलाई 2011 को वायुयान से सानन्द कर रहे थे। अहिरखाँ हवाई अड्डे पर उनका विमान दुर्घटनाग्रस्त हो गया। सभी यात्री सुरक्षित बच गए। विमान से उतरने के बाद भी उनके चेहरे पर डर साफ झलक रहा था। बोले, जान ही निकल गई थी बॉस! आँखे बन्द करके चुपचाप बैठा रहा। कुछ अच्छे कर्म थे जो बच गया। आसमान से उतरकर लौहपथ (रेल की पटरी) पर यात्रा की कल्पना कर लीजिए। रेलगाड़ी में सवार यात्री ने प्लेटफार्म पर खड़े विक्रेता को अठन्नी (पैसे) दी और अख़बार क्रय किया। जैसे ही ट्रेन चली, दोनों ही प्रसन्न होकर बोल पड़े-- चल गई, चल गई। रेलयात्री इसलिए बोल पड़ा था कि उसकी खोटी अठन्नी चल गई थी। अख़बार वाला इसलिए बोल पड़ा था कि ट्रेन चली गयी। यात्री इसी तिथि के एक वर्ष पुराने अखबार को देखकर अब बदलने नहीं आ सकेगा।

लौहपथ से उतरकर अब सड़क पर आ जाइए। यहाँ भी एक व्यक्ति चल गयी, चल गयी, चिल्लाता दौड़ता जा रहा था। साम्प्रदायिक रूप से संवेदनशील क्षेत्र में भीड़ की भीड़ उसके पीछे भागने लगी। बहुत दूर निकल जाने पर लोगों ने उसको रोककर 'चल गयी' का रहस्य जानना चाहा, तो उसने सहज भाव से उत्तर दिया– मेरी खोटी चवन्नी चल गयी थी, अब तो चवन्नी, अठन्नी दिखाई ही नहीं देती, तब इनका प्रभूत मूल्य हुआ करता था।

चेतन भगत ने अपने सुरक्षित रहने के लिए कुछ अच्छे कर्मों का महत्व प्रदर्शित किया, जबकि आज के लोग दूसरे प्रसंगों के अनुसार खोटे कर्मों में संलग्न रहकर प्रसन्न रहना चाहते हैं। उच्च से उच्चतर स्तर तक शिक्षित व्यक्ति अधिकतम वैज्ञानिक उपलब्धियों का लाभ उठाकर खोटे कर्मों के कीर्तिमान नहीं, अकीर्तिमान स्थापित करने में मग्न हैं। इन कुकर्मों की चमक–दमक में फँसकर बहुसंख्य लोग इन्हीं में ऊपरी सुख अनुभव करते हैं। उन्हें दाम ही दाम दिखाई देता है। इसका परिणाम जब आता है तो वे देखने योग्य ही नहीं रहते। पढ़ा–लिखा विद्वान् अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता जा रहा था कि आगे आ गया–तिराहा। वह किधर जाए, यह सोच ही रहा था कि उसे अपना पाठ याद आ गया। **''महाजनो येन गतः स पन्था''** मार्ग तो वही है जिस पर महाजन चलते हैं, वहाँ गाजे–बाजे के साथ एक बारात निकल रही थी जिस पर बड़ी संख्या में लोग जाते हों वही तो पन्थ है। वह पढ़ा–लिखा विद्वान् उसी बारात के साथ हो लिया। अपने गन्तव्य से तो भटक ही गया था, दुर्दशा और करा बैठा। आज भी लोग लकीर का फ़कीर बनकर एक–दूसरे को ठगने में लगे हुए हैं। विज्ञान के दुरुपयोग से लोग बिना गाय के दूध, बिना दूध के घी–पनीर, बिना दवाई के कैप्सूल और विषपान कराके लूट–खसोट और न जाने क्या–क्या अनाचार, अत्याचार करते चले जा रहे हैं। स्वार्थ व प्रलोभनवश एक अधिकारी से दो–दो उच्चाधिकारियों की हत्या करायी जाती है और बाद में उस अधिकारी को अपनी पोल खुल जाने के भय से मार दिया जाता है। इस बहुसंख्यक भीड़ को महाजन नहीं कह सकते हैं।

विश्लेषण करने पर मनुष्य समुदाय चार श्रेणियों में सूचीबद्ध किया जा सकता है– 1. जनः वे लोग जो जन्म लेते हैं। खाने–पीने भर को कमाते हैं और मर जाते हैं। 2 सज्जनः जो प्रतिष्ठापूर्वक कमाते हैं, अपनी कमाई से परोपकार करते हैं और दुराचार से बचकर चलते हैं। 3. दुर्जनः जो अधर्माचरण, अपराध, अत्याचार, करके अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। अपना लाभ लेने के लिए दूसरे की हानि करते हैं। कभी–कभी अपनी हानि उठाकर भी दूसरे को कठिनाइयों में डालना, इनके लिए साधारण–सी बात होती है। 4. महाजनः विद्वान्, धार्मिक, महान् आत्माओं की संख्या यद्यपि न्यून होती है किन्तु इनका जन्म संसार के उपकार व कल्याण के लिए ही होता है। अपनी क्षति, यहाँ तक आत्मोत्सर्ग करके भी देश–विश्व का भला करते हैं। इन्हीं को इंगित करता वेद कहता है– **'देवानापि पन्थामगन्म''** (**अथर्व. 19.59.3**) अर्थात् उस मार्ग पर चलो जिस पर महाजन, देवजन चलते हैं।

श्रीमान्! आप चलते–चलते तिराहे पर आ गए हैं। अपना मार्ग पहचानना चाहते हैं तो वेदवाणी इसमें आपकी सहायता के लिए तत्पर है।

प्रथमेन प्रमारेण त्रेधा विष्वङ वि गच्छति।
अद एकेन गच्छत्यद एकेन गचछेती हैकेन निषेवते।।
(अथर्व 11.8.33)

भावार्थ : इस जन्म से पहले के भोग से बचे कर्मों का भार और मृत्यु समय वर्तमान जीवन के भोग से बचे कर्मों का भार लेकर प्राणी तीन प्रकार की गतियों के अनुसार अपने परलोक की यात्रा करता है। एक शुभ कर्मों को संग्रह करते हुए मनुष्य स्वर्गोपरि मोक्ष सुख को पाता है। एक पाप कर्मों के वशीभूत होकर नरकगामी होता है। एक पुण्य–पाप के मिश्रित कर्मों के फल स्वरूप मृत्यु लोक पुनर्जन्म को प्राप्त करता है। हम सभी दिन प्रतिदिन दूर–पास की यात्राएँ करते ही रहते हैं। किसी यात्रा में बड़ा पुलिन्दा (सूटकेश) किसी में गठरी (ब्रीफकेश) एवं किसी में और कुछ नहीं तो बटुआ (पर्स) या जेब (पॉकेट) को साथ लेकर चलना ही पड़ता है। स्थूल, दृश्य देह तो 'भस्मान्त शरीरम्' हो जाती है, किन्तु अदृश्य सूक्ष्म शरीर जीवात्मा के साथ हर यात्रा में तब तक सहायक बना रहता है, जब तक उसे परमेश प्रभु का मोक्षधाम नहीं मिल जाता। अध्यात्म वेत्ताओं ने इस जन्म–मरण की यात्राओं में कर्मों की इस गठरी की समीक्षा इस प्रकार की है।

पुण्य और पाप का मूल्य सूचकांक यदि समान होता है, तो तिराहे पर खड़ा ऐसा यात्री जाता है–भूलोक या मृत्यु लोक को। ईश्वर ऐसे जीव को साधारण मनुष्य का जन्म देते हैं। इस साधारण से वह असाधारण बन सकता है। यदि वह निरन्तर श्रेष्ठ कर्म करता है तो उत्तम गति को प्राप्त कर सकता है और यदि निकृष्ट कर्म करता है तो अधम गति की ओर चला जाता है। पाप अधिक पुण्य न्यून मूल्य सूचकांक वाले प्राणियों को ईश्वर न्यायपूर्वक कीट–पतंग, पशु–पक्षियों की अन्ध योनियाँ प्रदान करता है अर्थात् वह मार्ग नरक लोक को ले जाने वाला होता है। जिनके पुण्य अधिक, पाप न्यून होते हैं ऐसे मूल्य सूचकांक वाले प्राणियों को ईश्वर उच्च धार्मिक, महात्माओं से सम्पन्न परिवार में जन्म देता है अर्थात् वह मार्ग स्वर्ग–लोक को ले जाता है। ऐसे सर्वोत्तम श्रेष्ठ मार्ग पर जन्म जन्मान्तरों से जो अपनी यात्रा पर निरन्तर गतिमान रहते हैं, वे ही तो प्रभु प्यारे होकर मोक्षधाम के अधिकारी बन जाते हैं। यह बात मात्र सिद्धान्त की नहीं। आर्यावर्त भूमि के अरबों वर्षों के इतिहास में ऐसे महापुरुषों की असीम शृंखला विद्यमान है। ध्रुव, प्रह्लाद, राम, कृष्ण, महावीर, गौतम और दयानन्द प्रभृति इस शृंखला के माणिक मुक्ता हैं। प्रश्नोपनिषद् भी ऐसा ही संकेत करते हुए कहता है– **'पुण्येन पुण्यलोकं नयति पापेन पापं उभाभ्यामेव मनुष्य लोकं।'** किए हुए शुभ–अशुभ कर्मों का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है। बिना भोगे कर्मों का करोड़ों जन्मों तक, नाश नहीं होता है। यही तो हमारे शास्त्रों की चेतावनी है–' **अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्। नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटि शतैरपि।।'** (शि.पु.) जीवन में जहाँ उत्पत्ति का अलंकरण है, वहाँ प्रायश्चित का परिक्रमण भी महत्त्वपूर्ण है। पञ्चतंत्र में कहा गया है– **'यस्मिञ्जीवन्ति जीवन्ति बहवः सोऽत्र जीवतु। वयांसि किं न कुर्वन्ति चञ्च्वा स्वोदर पूरणम्।।'** इस संसार में जिसके जीने से बहुत से जीव जीवित रहते हैं, उसी का जीना, जीना है। वैसे तो पक्षीगण भी निज चोंच से क्या अपना पेट नहीं भर लेते हैं? न चाहते हुए जब सम्राट दशरथ, शान्तनु एवं भीष्म पितामह देवव्रत आदि से भूलें हो सकती हैं, तो सामान्य जन की बात ही क्या। इसके लिए नीतिज्ञ महात्मा विदुर ने कहा है– **दानं, शौचं, दैवतं मंगलानि प्रायश्चित्तान विविधाँल्लोक वादन्। एतानि यः कुरुते नैत्यिकानि तस्योत्थानं देवताराधयन्ति।।'** अर्थात् जो व्यक्ति दान, अन्दर बाहर की शुचिता, यज्ञादि शुभ कर्म, लौकिक आचार, व्यवहारों एवं नित्य करणीय कर्म करता है और भूलवश हो गई त्रुटियों के लिए पश्चात्ताप, प्रायश्चित करता है, देवता (दिव्य शक्तियाँ) उसे उत्कर्ष की ओर ले जाते हैं। तर्कधारियों से क्षमा याचना के साथ एक दृष्टान्त प्रस्तुत है। सामूहिक यज्ञ में नियमित आने वाली एक महिला को कठिनाई होने लगी। जैसे वह अपने हाथ से आहूति देती तो उसके हाथों में जोर की खुजली उठती। वह आहूति देने से वंचित हो जाती और मंत्रों से भी ध्यान हट जाता। इस समस्या को उसने धर्माचार्य को बताने से पूर्व कुछ उपचार भी कराया। धर्माचार्य ने कई दिन की चर्चा के बाद उस महिला से कहलवा ही लिया कि वह जिस मेगामार्ट में विक्रय सहायिका एवं कोष रक्षिका है, वहाँ से कुछ रुपए चुरा लेती थी। अब बन्द भी कर दिया है तो भी खुजली बन्द नहीं हुई। धर्माचार्य ने उस महिला को मालिक से अपनी चोरी स्वीकार करने को कहा। कई दिन बाद उसने संकोचपूर्वक मालिक के समक्ष स्वीकार किया। धर्माचार्य भी उसके साथ रहे। भविष्य में चोरी न करने के वचन व प्रताड़ना के सहन करने के बाद उसके हाथों की खुजली तो चली ही गई और नौकरी भी बची रह गई। महिला शुभ कर्म पथ पर अग्रसर हो गई।

'वरेण्यम्' अवन्तिका (प्रथम) रामघाट मार्ग,
अलीगढ़, उत्तर प्रदेश

तरुण क्रान्तिकारी मदनलाल धींगरा का अमर बलिदान

चली आ रही उपेक्षा की पृष्ठभूमि

● हरिकृष्ण निगम

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में जिन तरुण क्रान्तिकारियों ने अपने को देश पर बलिदान कर दिया था उनमें एक धुन का धनी 27 वर्षीय युवा मदनलाल धींगरा का अदम्य साहस अनूठा कहा जाएगा। अंग्रेजों द्वारा लन्दन में उसे दी गई फाँसी की सजा भारतीय जनमानस पर कदाचित अगली सदियों तक मर्मान्तक प्रहार इसलिए करती रहेगी कि हमारे देश के तत्कालीन चर्चित शीर्षस्थ नेताओं ने उनके योगदान को सुनियोजित रूप से अनदेखा ही नहीं किया बल्कि विस्मय इस बात पर है कि मात्र अंग्रेजों को प्रसन्न करने के लिए इस अमर बलिदानी की प्रत्यक्ष रूप से निन्दा भी की गई। कांग्रेसी मानसिकता का उसके प्रति यह रुझान आज तक दिखता है।

अगस्त 17, 1909 के दिन मदन लाल धींगरा को फाँसी दी गई थी। उनका अपराध था कि भारत की स्वतंत्रता का घोर विरोध करने वाले एक ब्रिटिश सांसद कर्जन वाइली को उसने गोली मार दी थी। मात्र 45 दिन तक चले मुकदमे के बाद उन्हें फाँसी पर चढ़ा दिया गया था। पर जब इस युवा भारतीय के बलिदान की शताब्दी की तिथि 17 अगस्त 2009 में आई थी तब हमारे देश की सत्तारूढ़ सरकार ने उस अवसर को आधिकारिक रूप से याद करना भी उचित नहीं समझा था। जहाँ मदनलाल धींगरा का जन्म हुआ था उस राज्य पंजाब में भी बिना किसी अग्रिम प्रचार के मात्र एक छोटा सा समारोह ही नाम के लिए आयोजित किया गया था जिसकी पहल राज्य के स्वास्थ्य मंत्री लक्ष्मीकान्त चावला ने की थी। उपेक्षा की तो यह स्थिति थी कि उस समारोह में भी मदनलाल धींगरा की आयु को गलत दिखाकर मात्र खानापूरी जैसी की गई थी। यह उत्सव अमृतसर में हुआ था जहाँ मदनलाल धींगरा पैदा हुए थे। अपने भाषण में स्वास्थ्य मंत्री लापरवाही से धींगरा की आयु बार–बार 21 वर्ष कहते रहे जब कि फाँसी के समय उनकी आयु 27 वर्ष थी। केन्द्र सरकार ने भी उस समय उपेक्षा की सीमा लाँघ दी और उसके जीवनवृत्त के प्रेरणादायक रूप को आधिकारिक रूप से युवाओं के समक्ष कभी नहीं रखा। यह उपेक्षा सदैव कांग्रेस ने जानबूझ कर उस शहीद की स्मृति को अपमानित करने के लिए कई बार दिखाई थी।

मदनलाल धींगरा का जन्म अमृतसर के एक समृद्ध परिवार में फरवरी 18, 1883 में हुआ था। उनके पिता डॉ. दित्तामल एक प्रसिद्ध सिविल सर्जन थे जिनकी उस शहर में काफी सम्पत्ति और छह बंगले भी थे। वे नगर के पहले शल्य चिकित्सक थे जिनके पास कई गाड़ियाँ थीं और अंग्रेज़ों ने उन्हें 'रायसाहब' की पदवी भी दे रखी थी।

पर इस शान शौकत के बावजूद उनका पुत्र मदनलाल धींगरा प्रारम्भ से ही विद्रोही प्रकृति का था। पिता को जब उनकी स्वतंत्रता के लिए कुछ भी करने की प्रकृति व दृढ़ता का अहसास हुआ तब उन्होंने युवा धींगरा को खुले आम त्याग दिया था। तब धींगरा लाला लाजपत राय व भगत सिंह के सम्पर्क में आ गए। उस समय वे लाहौर के एक कॉलेज के विद्यार्थी थे। मदनलाल धींगरा के बड़े भाई ने भी उन्हें वह रास्ता छोड़कर उच्चस्तर की शिक्षा के लिए लंदन जाने को मना लिया था।

धींगरा लन्दन 1906 में चले गए और अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष करने के उद्देश्य से कुछ अन्य भारतीयों के सम्पर्क में आ गए। वे दूसरे स्वतंत्रता सेनानी श्यामजी कृष्ण वर्मा और वीर सावरकर से अत्यंत प्रभावित हुए जो विदेश में रह कर भारत की स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे थे। उनके ऊपर वीर सावरकर का प्रभाव इतना गहरा था कि उन्होंने ब्रिटिश एम.पी. कर्जन वाइली को, जो अंग्रेज प्रशासन के लिए कुछ भारतीयों को अपने जासूसों की तरह भर्ती कर रहा था। उसे गोली से उड़ा दिया। वह जून 1909 का अंत था और 17 अगस्त 1909 में मात्र 45 दिनों के मुकदमे के नाटक के बाद उन्हें फाँसी पर चढ़ा दिया गया।

उस समय भी महात्मा गांधी और कुछ कांग्रेसी नेताओं ने मदनलाल धींगरा को बलिदानी स्वतंत्रता सेनानी के यश से क्यों वंचित रखा और आज भी उसका नाम लेने से वे क्यों सकोच करते हैं–उनकी राष्ट्रद्रोही प्रकृति के पीछे क्या रहस्य है इसके लिए पिछले घटनाक्रमों की बारीकी से जाँच जरुरी है। विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या अपने ही देश पर प्राण उत्सर्ग करने वालों का चरित्र हनन कर हमारा राष्ट्र अपनी अस्मिता बचा सकेगा?

हमें 1908 और 1909 के भारत के राजनीतिक परिदृश्य पर दृष्टिपात करना आवश्यक है, जब अंग्रेजों के विरुद्ध किसी भी आन्दोलन के विरुद्ध अंग्रेज़ों के अत्याचारों का रूप वीभत्स होता जा रहा था। आन्दोलन ने हिंसक रूप उस समय अपना लिया था जब बाल गंगाधर तिलक को मांडले जेल भेजा गया था और उनके कारावास में आग लगा दी थी। तब तक भारतीय राजनीति पर महात्मा गांधी की छाया भी नहीं पड़ी थी। कलकत्ते के 'स्टेट्समैन' नामक ब्रिटिश समाचार पत्र ने स्वयं लिखा कि उनके पत्र में महात्मा गांधी का नाम सबसे पहली बार अक्टूबर 1908 में ही छपा था जो दक्षिण अफ्रीका की ट्रान्सवाल सरकार के सन्दर्भ में था। उसी साल नवम्बर 1908 में कलकत्ते में बंगाल के लेफ्टीनेंट गवर्नर सर एन्ड्रू फ्रेजर की कॉलेज स्ट्रीट के ओवर टाउन हाल में भीड़ के समक्ष हत्या की कोशिश की गई थी। 9 नवम्बर 1908 को ही नदलाल बनर्जी नामक उस पुलिस इन्स्पेक्टर की गोली मारकर हत्या की गई जिसने मुजफ्फरपुर में किंग्स फोर्ड की हत्या करने वाले खुदीराम बोस के साथी प्रफुल्ल चाकी को पकड़ा था। उसी समय माणिक टोला, अलीपुर, चटगाँव और कई स्थानों पर अंग्रेज अधिकारियों की हत्या हुई और अंग्रेजों ने बौखला कर उन्हें 'अराजकवादी' कह कर कांग्रेस के कथित 'नरमदल' का समर्थन पाने के लिए जी तोड़ कोशिश कर उन्हें अपने पक्ष में लेने के लिए फूट डालने का हर प्रयत्न किया। यह काम उन्होंने कलकत्ता में मुस्लिमों के 1909 में आयोजित बड़े अधिवेशन के साथ–साथ महात्मा गांधी को प्रभावित करने के साथ किया जो पहले ही 1901 में भारत लौट आए थे पर राजनीति में उनकी भूमिका तब तक नगण्य थी। किंग्जफोर्ड जो कलकत्ते में 1904 से 1908 तक चीफ प्रेजीडेन्सी मजिस्ट्रेट थे, उनका मुजफ्फरपुर में स्थानान्तरण हुआ था जहाँ पर उनकी हत्या का प्रयास दिनेश चन्द्र राय और खुदी राम बोस ने 10 अप्रैल 1908 को किया था। श्रीमती और कुमारी केनेडी जो किंग्जफोर्ड के साथ मुज़फ्फ़रपुर क्लब में ब्रिज खेल रही थी, वे मारी गई थी। इस अपराध में बरीन्द्र कुमार घोष के साथ तीन व्यक्तियों को दस साल की और अन्य तीन को सात साल की

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

वरिष्ठ नागरिकों के लिए शुभ सूचना

आयुधाम सोसायटी सीनियर सिटीजन होम जो पिछले 25 वर्षो से वृद्ध लोगों के लिए सेवा का कार्य कर रही है, आयुधाम सोसायटी में नवीन भवन निर्माण के माध्यम से वरिष्ठ नागरिकों के लिए आवासीय सुविधा का विस्तार किया गया है। आप सभी से अनुरोध है कि वरिष्ठ नागरिकों को रहने की जरूरत महसूस हो तो आप उन्हें यहाँ पर आने की प्रेरणा दें। अगर आप या आपके साथियो को भी रहने की आवश्यकता हो तो आपका भी स्वागत है। रजिस्ट्रेशन फार्म उपलब्ध है। सम्पर्क सूत्रः श्री अशोक आनन्द मो. नं. 9654783140 अथवा श्री आर.पी. रहेजा मो. न., 9717054558

☞ पृष्ठ 04 का शेष

संस्कारों का प्रयोजन...

इसका उत्तर यह है कि हम यज्ञादि को गौण और जीवनचर्या को मुख्य नहीं मानते। हमारे लिए यज्ञादि और जीवनचर्या दोनों संस्कार के भिन्न–भिन्न भाग हैं और गौण नहीं, किन्तु मुख्य हैं। अपने–अपने स्थान में सभी मुख्य हैं, गौण कुछ भी नहीं। जहाज के धरातल में छोटी–से–छोटी कील भी मुख्य है, क्योंकि उसके बिना जहाज को हानि पहुँच सकती है। इसी प्रकार यज्ञ रचाना, मन्त्र पढ़ना, आशीर्वाद देना या लेना, प्रतिज्ञाएँ करनी, ये भी मुख्य ही हैं, गौण नहीं।

आज जो काबुल के पठान के विवाह का दृष्टान्त देते हैं, वह भी ठीक नहीं। उसमें वैदिक विवाह का केवल एक अंश मिलता है, अर्थात् यौवन काल। यह तो केवल भौतिक अंश है। यदि यह मान लिया जाए कि जीवात्मा पर केवल भौतिक वस्तुओं का प्रभाव पड़ता है, तो यह ठीक हो सकता है, परन्तु जो यज्ञ रचा जाता है और जो मन्त्र पढ़े जाते हैं, उनसे आत्मिक और सामाजिक उन्नति भी अभिष्ट होती है। काबुली पठान को केवल यह ज्ञान है कि पूर्ण युवावस्था में विवाह करना चाहिए, परन्तु उसको वैदिक–विवाह के आदर्श का तो पता ही नहीं। इसलिए वह विवाह को भौतिक इच्छा निवृत्ति का साधन मात्र समझता है। उसके हृदय में अपनी स्त्री के लिए वह गौरव भी नहीं है, जो वैदिक शास्त्रों में दिया हुआ है। वह तो स्त्री को पैर की जूती समझता है। उसकी दिनचर्या भी वैदिक नियमानुकूल नहीं है, अतः वह अपने सन्तान के ऊपर भी सुसंस्कृत प्रभाव नहीं डाल सकता।

"अग्निर्ज्योति" चाणक्यपुरी
अमेठी उ.प्र.–227405
मो. 09415185521

हम उत्तम बुद्धि व ज्ञान की वाणियों का सेवन करें

● डॉ. अशोक आर्य

मानव जीवन में प्राणायाम का विशेष महत्व है। इसलिए इसे पुरुदसस कहा गया है। यह प्राणायाम ही हमें उत्तम बुद्धि देने वाला है, हमें उत्तम बुद्धि रूपी धन का भण्डारी बनाता है, इस धन से हमें सम्पन्न करता है। उत्तम बुद्धि का भण्डारी बनाकर प्राणायाम के ही कारण ज्ञान की वाणियों अर्थात् वेद के आदेश का सेवन करने वाला यह हमें बनाता है। प्राणायाम के ही कारण हम ज्ञान की वाणियों का सेवन कर पाते हैं। इस बात का परिचय इस मन्त्र के स्वाध्याय से हमें इस प्रकार मिलता है:

अश्विना पुरुदससा नरा श्वीरया धिया।
धिष्ण्या वनत गिरः ।। ऋग्वेद 1.3.2

इस मन्त्र में चार बातों पर प्रकाश डाला गया है:-

1. प्राण अपान गतिशील रहें

मन्त्र कह रहा है कि हे प्राण तथा अपानो! आप हमारे पालक बनो। आप ही हमारे पूरक कर्मों को करने वाले बनो। इस तथ्य से यह स्पष्ट होता है कि हमारे प्राण तथा अपान अर्थात् हम जिस श्वास के लेने व छोड़ने की क्रिया करते हैं, वह क्रिया ही हमारी पालक है, हमारा पालन करने वाली है, हमें जीवित रखने वाली है। हमारे जीवन को सुख पूर्वक चलाने वाली है। हम इस के आधार पर ही जीवित हैं। जब श्वास की यह क्रिया रुक जाती है तो हम जीवन से रहित होकर केवल मिट्टी के ढेले के समान बन जाते हैं। गत मन्त्र में भी लगभग इस तथ्य पर ही प्रकाश डालते हुए कहा गया था कि हमारे प्राण व अपान क्रियाशील हैं। यह क्रिया ही मानव का ही नहीं अपितु प्रत्येक जीव का, प्रत्येक प्राणी का पालन करने वाली हो। भाव यह कि हमारे प्राण (श्वास लेने की क्रिया) तथा अपान (श्वास छोड़ने की क्रिया) निरन्तर चलती रहे, क्रियाशील बनी रहे। हम जानते ही हैं कि यह प्राण अपान ही हमारे अन्दर जीवनीय शक्ति भरते हैं। इसके बिना हम एक पल भी जीवित नहीं रह सकते। इसके बिना हम क्रियाहीन होकर मृतक कहलाते हैं।

2. गतिमान व क्रियाशील बनें

इस प्रकार हमारे शरीर में प्राण व अपान क्रियाशील रहते हैं तो हम भी जीवित कहलाते हैं, क्रियाशील रहते हुए अपने जीवन को निरन्तर आगे ले जाने का यत्न करते हैं। अनेक प्रकार की उपलब्धियाँ पाने का यत्न करते हैं। सदा उन्नति के पथ पर ही अग्रसर रहने का प्रयास करते रहते हैं। यदि प्राण-अपान हमारे शरीर में गतिमान नहीं होते तो हम क्रियाविहीन हो जाते हैं, जिसे मृतक की संज्ञा दी जाती है। इसलिए मन्त्र जो दूसरी बात हमें समझाने का यत्न कर रहा है, वह यह है कि हमारे प्राण व अपान इस प्रकार सदा कर्म शील रहते हुए हमें आगे तथा और आगे ले जाने वाले बनें। स्पष्ट है कि हम जीवन में जो कुछ भी पाते हैं, यहाँ तक कि उस प्रभु का जो स्मरण भी हम करते हैं तो वह भी प्राण और अपान के कारण ही लेते हैं। इसलिए हम पिता से प्रार्थना करते हैं कि हे पिता! हमारे प्राण व अपान को सदा गतिमान, सदा क्रियाशील बनाए रखे।

3. स्वाध्याय द्वारा सोम कण सुरक्षित करें

मन्त्र के तृतीय भाग में कहा गया है कि जब शरीर में प्राण व अपान गतिमान होते हैं तो हम भी गतिमान होते हैं, क्रियाशील होते हैं। क्रियाशील होने के कारण ही हम में स्वाध्याय की शक्ति आती है। स्वाध्याय करके ही हम वह शक्ति पा सकते हैं, जिसमें जीवन है। जिसमें जीवन ही नहीं है, मात्र एक मृतक शरीरवत, लाश मात्र है, वह क्या कुछ करेगा, वह तो क्रियाविहीन होता है। इस कारण किसी भी क्रिया को करने की उससे कल्पना भी नहीं की जाती। इसलिए शरीर में प्राण व अपान का निरन्तर चलते रहना आवश्यक है। जब प्राण व अपान क्रियाशील रहते हैं तो शरीर क्रिया शील रहता है तथा क्रियाशील शरीर ही कुछ करने की क्षमता रखता है। ऐसे शरीर में ही स्वाध्याय की शक्ति होती है तथा हम स्वाध्याय के माध्यम से अनेक प्रकार के ज्ञान का भण्डार ग्रहण करने के लिए सशक्त होते हैं। इस तथ्य पर ही मन्त्र के इस भाग में उपदेश किया गया है कि हमारे प्राण तथा अपान हमें उत्तम बुद्धि देने वाले हों। जब हम प्राण तथा अपान को संचालित करते हैं तो इस की साधना से हमारे शरीर में सोमकण सुरक्षित होते हैं तथा हमारी बुद्धि को ये कण तीव्र करने का कारण बनते हैं।

4. हमारी बुद्धि तीव्र हो

मन्त्र कहता है कि प्राण व अपान के सुसंचालन से हमारे शरीर में बुद्धि को तीव्र करने वाले जो सोम कण पैदा होते हैं, उनसे हमारी बुद्धि तीव्र होती है। यह तीव्र बुद्धि ही होती है जो मानव को कभी कुण्ठित नहीं होने देती, जिस प्रकार कुण्ठित तलवार से किसी को काटा नहीं जा सकता, कुण्ठित चाकू से सब्जी को भी ठीक से नहीं काटा जा सकता, ठीक इस प्रकार की कुण्ठित बुद्धि से उत्तम ज्ञान भी प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार जिन की बुद्धि कुण्ठित नहीं होती, जिन की बुद्धि तीव्र होती है, वह बुद्धि किसी भी विषय को ग्रहण करने में कुण्ठित नहीं होती, किसी भी विषय को बड़ी सरलता से ग्रहण कर लेती है। इस प्रकार मन्त्र कहता है कि अपनी इस तीव्र बुद्धि से हम ज्ञान की वाणियों का अर्थात् वेद के मन्त्रों का सेवन करें, इन का स्वाध्याय करें, इन का चिन्तन करें, इनका मनन करें, इनको अपने जीवन में धारण करें।

मन्त्र का भाव है कि हम अपने जीवन में प्राणायाम के द्वारा प्राण साधना करें। इस प्राण साधना से ही हम तीव्र बुद्धि वाले बनें। तीव्र बुद्धि वाले बन कर हम अपनी इस बुद्धि से ज्ञान की वाणियों के समीप बैठ कर इन का उपासन करें। भाव यह कि हम वेद का स्वाध्याय करें। हम बुद्धि को व्यर्थ के विचारों में प्रयोग न कर इसे निर्माणात्मक कार्यों में लगावें।

104-शिप्रा अपार्टमेन्ट
कौशाम्बी 201010 **गाजियाबाद**
चलभाष 09718528068

मन, मनन और नमन

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

दो अक्षर हैं और शब्द हैं तीन, पर कमाल देखिए, दो अक्षर तीनों शब्दों में समाए हुए हैं। किसी को भनक तक न लगी। वे तीन शब्द हैं – मन, मनन और नमन। दो अक्षर हैं- 'म' और 'न' दोनों अक्षर हठीले और जिद्दी, नकारात्मक सोच वाले। कैसे? बताता हूँ, संस्कृत में 'मा' का अर्थ होता है-नहीं। जैसे 'तत्र मा गच्छ' अर्थात् वहाँ मत जाओ। इसी प्रकार 'न' का भी अर्थ होता है 'नहीं' उदाहरणार्थ 'अहं न पठिष्यामि' अभिप्राय है, मैं नहीं पढूँगा। जहाँ दो-दो नकारात्मक सोच वाले अक्षर मिल जाएँ, वहाँ सकारात्मक सोच कैसे हो सकती है? इन्हीं नकारात्मक सोच वाले दो अक्षरों के जुड़ने से बनता है एक शब्द, जिसका नाम है-मन। जैसे बिगड़े हठीले अक्षर, वैसा ही तज्जन्य मन। इसी हठीले मन का हमारे शरीर पर साम्राज्य है। यही तो हम सबकी मुसीबत है। तभी तो हम सहम कर, डर कर कहते हैं-**'तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु।'**

अब आगे बढ़ते हैं। जहाँ दो हों, वहाँ बात छिपी रहती है, गुप्त रहती है पर जहाँ तीन हो जायँ वहीं बात छिपाने पर भी नहीं छिप सकती कभी न कभी खुल ही जाती है। अतः हमने दो अक्षरों वाले मन को साधने के लिए, उसके रहस्यों से अवगत होने के लिए उसके साथ एक जासूस लगा दिया और उस जासूस का नाम भी है-'न' अब 'मन' के साथ 'न' के जुड़ने से बन जाए-मनन। अब उसका औद्धत्य चकनाचूर हो गया। घमंड नष्ट हो गया। वह स्वयं के बारे में विचार करने के लिए विवश हो गया। अपनी त्रुटियों या न्यूनताओं का निरीक्षण करने लगा। उसकी नकारात्मक सोच सकारात्मक सोच के रूप में परिवर्तित हो गई। केवल संकल्प-विकल्प पर सिमिट कर रहते, मन अब आध्यात्मिक चिन्तन से जुड़ गया और पुकार उठा-'परमात्म को पाइये, मन के ही परनीत।'

अब तीसरे शब्द पर विचार करते हैं और तीसरा शब्द है-'नमन' तीसरा शब्द बनाने के लिए हमने केवल 'नमन' के 'न' को मन के शुरु में लगा दिया। नमन का अभिप्राय है- झुकना, प्रणाम करना। आपने देखा होगा, कि जब एक बच्चा शरारत करता है तो आप उसे सुधारने के लिए सिर के बल खड़ा कर देते हैं। तब उसकी सारी शरारत दूर हो जाती है। इसी प्रकार मन को उल्टा किया तो वह सुधर गया और बन गया- 'नम' अर्थात् मैं झुक गया हूँ सबको नमन करता हूँ।

यदि 'मन' अनिश्चयात्मक स्थिति का प्रतीक है तो 'मनन' स्वाध्यायशीलता या चिन्तन का सूचक है। 'नमन' शब्द आध्यात्मिक विचार धारा या ईश्वर भक्ति को प्रकट करता है। यदि मन को वश में करना है तो पहले उसे मननशील बनाना पड़ेगा, अच्छे-बुरे का ज्ञान कराना पड़ेगा, उचित-अनुचित का पाठ पढ़ाना पड़ेगा, तभी वह 'नमन' के भाव को धारण कर सकता है। यह नमन ही आध्यात्मिकता का प्रथम सोपान है। 'मनः' और 'नमः' दोनों संस्कृत के शब्द हैं। दोनों का घनिष्ठ सम्बन्ध है। 'मनः' भौतिक चिन्तन का सूचक है तो 'नमः' शब्द आध्यात्मिकता की परिधि में आता है। मन को नम्र बनाने के लिए प्रार्थना, स्वाध्याय, साधना आदि का आश्रय लिया जाता है।

आपने गौर किया होगा कि वैदिक साहित्य में 'मनः' और 'नमः' दोनों शब्दों का अधिक प्रयोग देखने को मिलता है और दोनों कई बार एक दूसरे के आस-पास होते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि 'नमः' 'मनः' की औषध है। जब मन विकार ग्रस्त हो जाता है तब ईश्वर के प्रति नमन भाव मन को स्वस्थ कर देता है। 'नमः' या 'नमन' भारतीय संस्कृति का ध्वज है। जैसे सेना के आगे सबसे पहले उसका ध्वज होता है वैसे ही जब हम पहली बार किसी व्यक्ति से मिलते हैं तो हाथ जोड़कर उसे नमन करते हैं। हमारे जुड़े हुए हाथों को देखकर वह व्यक्ति अनुमान कर लेता है कि यह व्यक्ति भारतीय संस्कृति में स्नात है।

आवश्यकता इस बात की है कि हम इस मन को स्वच्छन्द न छोड़ें, इसे वेद शास्त्रों के प्रति आकृष्ट करने मननशील बनाएँ तभी यह ईश्वर के प्रति नमनशील होगा।

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम
ज्वालापुर (हरिद्वार)
मो. 9639149995

पंजाब में प्रचार कार्य

● श्री सुदर्शन सिंह चन्द्र

दिल्ली दरबार के समय लाहौर के कुछ प्रतिष्ठित व्यक्ति दिल्ली गए थे। वहाँ उनका स्वामी दयानन्द से परिचय हुआ था। इनमें अधिकांश व्यक्ति 'ब्राह्म समाज' के अनुयायी थे। स्वामी जी के असीम पाण्डित्य से वे बहुत प्रभावित हुए और दिल्ली में ही उन्होंने स्वामी जी से लाहौर पधारने का आग्रह किया था। उनके आग्रह को स्वामी जी ने स्वीकार कर लिया था।

अपने लाहौर जाने के कार्यक्रम के कारण ही स्वामी दयानन्द लुधियाना में अधिक समय नहीं रुक सके थे। 11 अप्रैल, 1877 को वे लाहौर पहुँचे। स्टेशन पर उनका स्वागत हुआ और वे दीवान रत्नचन्द दाढ़ीवाले के बगीचे में ठहराए गए। वहाँ स्वामी जी का प्रतिदिन प्रवचन होने लगा।

25 अप्रैल को बावली साहब स्थान में स्वामी जी का एक प्रवचन हुआ और उस प्रवचन ने लाहौर के पण्डितवर्ग में उनके विरुद्ध एक आन्दोलन खड़ा कर दिया। यह विरोध इतना बढ़ा कि इसके दबाव में स्वामी जी के शुभेच्छुओं को उन्हें दीवान रत्नचन्द्र के बगीचे से हटाकर डॉक्टर रहीम खाँ नामक एक मुसलमान सज्जन की कोठी में ठहराना पड़ा।

इसके अतिरिक्त लाहौर के ब्राह्म–समाज के लोग भी स्वामी जी से असन्तुष्ट हो गए। क्योंकि स्वामी जी ने जो प्रवचन किए उन प्रवचनों से ब्राह्म–समाज के सिद्धान्तों का पूरा ताल–मेल नहीं बैठता था। स्वामी दयानन्द ब्राह्म–समाज के सुधारक प्रयत्नों तथा अन्य मान्यताओं से प्रायः सहमत थे; किन्तु उनका प्रबल आग्रह था कि ब्राह्म–समाज को वेदों को परम प्रमाण मान लेना चाहिए। लेकिन ब्राह्म–समाजी वेदों को आप्त या अपौरुषेय ग्रन्थ मानने को सर्वथा प्रस्तुत नहीं थे। वेदों को वे प्रमाण–ग्रन्थ भी मानना नहीं चाहते थे।

स्वामी दयानन्द ने लाहौर के ब्राह्म–समाज के लोगों को वेदों की प्रामाणिकता स्वीकार कर लेने के लिए अनेक प्रकार से समझाया। स्वामी जी के इस प्रयत्न का परिणाम यह हुआ कि कुछ ब्राह्म–समाज के अनुयायी उनके अनुगत हो गए; किन्तु शेष ब्राह्म–समाज के लोग उनके प्रबल विरोधी भी हो गए और वे लोग उनका भी विरोध करने लगे जो स्वामी जी से सहमत हो गए थे। इस प्रकार लाहौर के ब्राह्म–समाज में फूट पड़ गई और उसमें से स्वामी जी से सहमत–वर्ग पृथक् हो गया। यह वर्ग छोटा ही था।

स्वामी दयानन्द जब लाहौर आए थे, तब उनके प्रारम्भिक दो सप्ताह का व्यय वहाँ के ब्राह्म–समाज ने ही उठाया था; किन्तु पीछे वह वर्ग विरोधी बन गया। उन लोगों ने स्वामी जी से सहमत लोगों को अपने समाज से पृथक् कर दिया।

इन सब विरोधों का एक ही परिहार था कि लाहौर में 'आर्य–समाज' की स्थापना की जाए। ब्राह्म–समाज के जो सदस्य स्वामी जी से सहमत हो गए थे, वे इसके लिए आग्रह करने लगे थे। अतः 24 जून सन् 1877 ई. गुरुवार को लाहौर में डॉक्टर रहीम खाँ की कोठी पर आर्य समाज की स्थापना हुई। इस प्रकार स्थानीय ब्राह्म–समाज के सदस्यों में से ही कुछ को लेकर पंजाब के आर्य –समाज की स्थापना हुई थी।

लाहौर में आर्य–समाज का प्रथम अधिवेशन 24 जून को डॉक्टर रहीम खाँ की कोठी में हुआ; क्योंकि दूसरा उपयुक्त स्थान इस कार्य के लिए उपलब्ध न हो सका। यह आश्चर्य की बात है और डॉक्टर रहीम खाँ के अतिशय उदार विचारों का परिचायक है कि उन्होंने स्वामी दयानन्द जैसे कट्टर वेदों के समर्थक को अपने यहाँ ठहराया ही नहीं, आर्य–समाज का पंजाब में प्रथम अधिवेशन भी उनके भवन में हुआ।

इसके पश्चात् 1 जुलाई को आर्य–समाज का दूसरा अधिवेशन 'सत्सभा' के मन्दिर में हुआ। वस्तुतः, इस दूसरे अधिवेशन में ही आर्य–समाज का संगठन हुआ। लाला मूलराज सभापति, श्री शारदाप्रसाद भट्टाचार्य उपसभापति एवं लाला जीवनदास आर्य–समाज के मन्त्री निर्वाचित हुए। तथा इसके दस नियम बनाए गए।

नियम :–

1. सब सत्य और विद्या से जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।
3. वेद सब सत्यविद्याओं का पुंस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यो का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य–असत्य को विचार करके करने चाहिए।
6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है। अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक, सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

जब यह कार्य चल रहा था, तो इसके साथ–साथ स्वामी दयानन्द के वेदभाष्य का कार्य भी संपन्न हो रहा था। वाराणसी से वेदभाष्य अकों के रूप में प्रकाशित होने लगा था लेकिन उसकी ग्राहक संख्या अत्यल्प थी। अतः प्रकाशन कार्य के लिए पर्याप्त आर्थिक व्यवस्था की अपेक्षा थी। स्वामी जी ने उस समय अपने सुहृदों से इस कार्य के लिए धन एकत्र करने के उपायों पर विचार किया। लोगों की सम्मति से सरकारी आर्थिक सहायता प्राप्त करने का प्रयत्न करना निश्चित हुआ। उस समय अंग्रेज़ी सरकार भारतीय प्राचीन साहित्य के प्रकाशन में सहायता दे भी रही थी।

एक प्रार्थना–पत्र लिखा गया और छपे वेदभाष्य के दो अकों के साथ उसे पंजाब सरकार के पास भेजा गया। सरकार तो अपनी पद्धति से ही कार्य करेगी। पंजाब सरकार ने उस भाष्य पर वेद के विद्वानों की सम्मति जानना आवश्यक समझा। अतएव वेदभाष्य के वे अंक सरकार की ओर से पंजाब यूनिवर्सिटी के रजिस्ट्रार के पास भेजे गए। यूनिवर्सिटी के तत्कालीन रजिस्ट्रार लैटनर साहब ने पण्डितों से सम्मति देने के लिए एक अनुरोध पत्र भी छपवाया और उस अनुरोध पत्र के साथ वेदभाष्य के अंक पण्डितों के पास भेजे। पण्डितों ने अपना–अपना अभिप्राय लिख कर भेजा और सरकार ने उनकी सम्मतियों को एक संग्रह के रूप मे प्रकाशित कराया। इससे यह सिद्ध है कि सरकार उदासीन नहीं थी। किन्तु जो सम्मतियाँ प्राप्त हुई थीं, उनमें से एक भी स्वामी जी के पक्ष में नहीं थी। इन सम्मति देने वालों में सब भारतीय व्यक्ति ही नहीं थे, टानी एवं ग्रिफिथ के समान पाश्चात्य वेदज्ञ प्राध्यापक भी थे और प्रायः सभी ने कहा था– 'यह भाष्य स्वकपोल–कल्पित एवं अप्रामाणिक है।'

स्वामी दयानन्द ने इन में से एक–एक विद्वान् की सम्मति को उद्धृत करके उसका खण्डन किया और उस प्रतिवाद को पुस्तक रूप में छपवा कर फिर प्रार्थना–पत्र के साथ सरकार के पास भेजा। लेकिन सरकार का निश्चय बदला नहीं। सरकारी अधिकारियों ने स्वामी जी के वेदभाष्य को कोई आर्थिक सहायता देना उपयुक्त नहीं समझा।

यह घटना एक दृष्टि से स्वामी दयानन्द के पक्ष में हुई क्योंकि पहले जब वे कलकत्ता गए थे तब भी वहाँ उनके विरोधियों ने जनता में यह भ्रम फैलाया था कि– 'स्वामी दयानन्द सरस्वती अंग्रेज़ सरकार से आर्थिक सहायता या निश्चित वेतन पाते हैं और अंग्रेज़ सरकार के आदेश से हिन्दूधर्म का खण्डन करते घूमते हैं।' लाहौर में भी स्वामी जी के विरोधियों ने इस बात का बहुत प्रचार किया; किन्तु वेदभाष्य के लिए सरकारी सहायता न मिलने की चर्चा फैलने से जनता में रहा सहा वह विरोधियों द्वारा फैलाया मिथ्याभ्रम भी दूर हो गया। इस घटना के बाद ही लाहौर में आर्य समाज की स्थापना हुई।

आर्य–समाज की स्थापना के पश्चात् स्वामी जी लाहौर से बाहर प्रचार करने निकले। अमृतसर प्रचार करते हुए जालन्धर पधारे। वहाँ उन्होंने 34–35 व्याख्यान दिए। एक दिन सरदार विक्रमसिंह ने कहा– 'सुनते हैं, ब्रह्मचर्य से बहुत बल बढ़ता है। इसका कोई उदाहरण बताइए, स्वामी जी मौन रहे। एक दिन जब सरदार साहब अपनी दो घोड़ों की गाड़ी पर सवार हुए, तो स्वामी जी ने चुपके से जाकर गाड़ी का पिछला पहिया पकड़ लिया। कोचवान ने घोड़ों को बढ़ाना चाहा, चाबुक मारे, पर वे बढ़ न सके। सरदार साहब ने पीछे मुड़ कर देखा, तो स्वामी जी ने मुस्कराते हुए कहा कि मैंने ब्रह्मचर्य की शक्ति का प्रमाण दे दिया है।

जालन्धर से स्वामी जी लाहौर लौट आए। लाहौर में अन्तरंग सभा के एक अधिवेशन में, जिसमें उपनियम बन रहे थे, स्वामी जी को सम्मति देने के लिए कहा गया। स्वामी जी ने कहा–"मैं आप की सभा का सदस्य नहीं हूँ। मुझे सम्मति देने का अधिकार नहीं है।"

लाहौर से फिरोज़पुर, रावलपिण्डी, जेहलम, गुजरात, गुजराँवाला आदि नगरों में उन्होंने भ्रमण किया तथा सभी स्थानों पर आर्य समाजें स्थापित हुईं। इस समय इतने स्थानों से उनके पास निमन्त्रण पत्र आने लगे कि उन सब का आमन्त्रण स्वीकार करना सम्भव नहीं रह गया। इन यात्राओं में ही वे मुलतान गए।

मुलतान में आर्य–समाज की स्थापना हो गई और स्वामी जी की उपस्थिति में ही वहाँ आर्य–समाज मन्दिर का शिलान्यास हुआ। मुलतान से स्वामी जी फिर लाहौर लौट आए और लगभग एक मास रुक कर जालन्धर पहुँचे। जालन्धर में मौलवियों के साथ उनका शास्त्रार्थ हुआ और वहाँ से वे सहारनपुर चले आए।

इस प्रकार पंजाब की यात्रा में जहाँ लाहौर में स्वामी जी का प्रबल विरोध हुआ, वहीं लाहौर उनके मत के प्रचार का मुख्य केन्द्र भी बना और आगे चलकर आर्य–समाज के उत्थान में लाहौर ने बहुत बड़ा योगदान किया। पंजाब में इसी यात्रा में स्वामी जी का प्रभाव व्यापक हो गया। उनके प्रति लोगों में उत्सुकता एवं आदर का भाव जागृत हो गया। इसके फलस्वरूप उनकी अनुपस्थिति में भी आर्य–समाज का कार्य वहाँ बढ़ता ही गया।

भारतीय नवोदय के अग्रदूत से साभार

पर्यावरण संरक्षण यज्ञ

● वेद प्रकाश शास्त्री

ओ३म् द्यौः शान्तिः, अन्तरिक्षं शान्तिः, पृथिवी शान्तिः, आपः शान्तिः, ओषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिः, विश्वे देवाः शान्ति, ब्रह्म शान्तिः, सर्वं शान्तिः, शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिरेधि।।

यजु. 36/17

1. द्यौः शान्तिः— द्युलोक शान्ति देने वाला हो अर्थात् द्युलोक का सूर्य शान्तिकर होकर तपे।

2. **अन्तरिक्षं शान्तिः**—अन्तरिक्ष लोक हमें शान्ति दे अर्थात् अन्तरिक्ष लोक का पर्जन्य (मेघ–बादल) अतिवृष्टि और अनावृष्टि का कारण न बने।

3. **पृथिवी शान्तिः**—पृथिवी शान्तिदायक हो अर्थात् पृथिवी लोक में शान्ति स्थापित हो। उपद्रव आदि न हों। पृथिवी में असन्तुलन अर्थात् भूचाल, भूमि–खनन, निर्माण हेतु पर्वतीय विस्फोट (सुरंग, सड़क, भवन आदि) परीक्षणार्थ परमाणु विस्फोट आदि से पृथिवी में असन्तुलन–हलचल आदि होने पर अशान्ति होती है। अतः हम सभी पृथिवी पर शान्ति स्थापित करने हेतु प्रयत्नशील हों।

4. **आपः शान्तिः** – जल हमारे लिए शान्तिदायक हों। नीरोगता प्रदान करें। शरीर शुद्धि के लिए जल सबसे अधिक सहायक है। मनुमहाराज कहते हैं–

अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति।।

जल से शरीर के सारे अंग शुद्ध होते हैं। उषा काल में जलपान से शरीर का आन्तरिक भाग भी शुद्ध होता है।

हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जब जल शुद्ध पवित्र और निर्मल होगा तभी हमारा शरीर भी शुद्ध, पवित्र और निर्मल बनेगा। शुद्ध जल केवल मनुष्य के लिए ही नहीं अपितु, पेड़–पौधे, वनस्पतियों तथा जीव–जन्तुओं के जीवन का रक्षक है।

5. **ओषधयः** शान्तिः– सोमलता आदि ओषधियाँ हमें शान्ति दें। रोगनिवारणार्थ जड़ी–बूटी के रूप में विभिन्न प्रकार के पेड़–पौधे प्रयोग किए जाते हैं। अन्न भी औषधि है। फल, फूल तथा अन्य खाद्य पदार्थ भी ओषधि हैं। परंतु जीभ के स्वाद के लिए प्रयुक्त खट्टे–मीठे, तले, चटपटे, अपाच्य तामसिक भोज्य पदार्थ ओषधि के अन्तर्गत नहीं आते।

सात्विक भोजन ही औषधि है। यही शान्तिकारक है,

आहारं शुद्धौ सत्त्व शुद्धिः।।

वस्तुतः अन्न क्षुधा रोग की औषधि है ओषधि के रूप में सन्तुलित मात्रा में प्रयोग किया जाता गया अन्न लाभदायक होता है। अतः आयुर्वेद कहता है–

हितभुक् मितभुक् ऋतभुक्

हितकारी खाओ, सन्तुलित खाओ, ऋतु–अनुकूल खाओ।

6. **वनस्पतयः शान्तिः**—वट आदि वनस्पतियाँ हमें शान्ति दें। वनस्पतियाँ भी शरीर की रक्षक हैं। शरीर की रक्षा के उद्देश्य से ही इनका सेवन करना चाहिए।

गाय, भैंस, भेड़, बकरी, गधा, घोड़ा, हाथी, मृग आदि पशु भी औषधि, वनस्पति सदृश पेड़–पौधों पर ही निर्भर हैं और मनुष्य इन पशुओं पर आश्रित है। इस प्रकार ये सभी एक दूसरे के सहयोगी हैं। अतः जड–चेतन अन्योन्याश्रित हैं।

7. **विश्वेदेवाः शान्तिः** – प्रकृति के सभी देव हमें शान्ति दें। अग्निदेवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रूद्रा देवताऽदित्या देवता मरूतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर् देवतेन्द्रो देवता वरूणो देवता।। यजु. 14/20।

8. **ब्रह्म शान्तिः**—वेदज्ञान हमें शान्ति दे। जिस पदार्थ के गुणधर्म का ज्ञान नहीं होता, वही हानिप्रद हो जाता है। वैदिक और लौकिक अर्थों का ध्यान रखें। अर्थ का अनर्थ न करें। यथा–शुक्लां बरधरं विष्णुं...

राजा भोज और लकड़हारा–यथा बाधति बाधते।।

9. **सर्वं शान्तिः**—जड़ चेतन सभी शान्तिदायक हों।

10. **शान्तिः एव शान्तिः** – शान्ति भी शान्तिदायक हो। कहीं हमारी शान्ति भी अशान्ति का कारण न बन जाए! शान्ति के लिए शरीर का क्रियाशील–गतिशील होना अत्यावश्यक है।

सामने आग लगी हो और मैं शान्त बैठा रहूँ, हाथ–पैर न हिलाऊ तो ऐसी शान्ति अनर्थ का कारण बनकर अशान्ति ही उत्पन्न करेगी। शरीर भी शान्त हो और मन भी। मन अशान्त हो तो भी शान्ति का अनुभव नहीं हो सकता।

11. **सा मा शान्तिरेधि** – वही सच्ची शान्ति हमें भी प्राप्त हो। त्रिविध शान्ति की प्राप्ति हो। इसका अर्थ है– त्रिविध ताप। इस संसार में तीन प्रकार के दुःख हैं–

1. **आध्यात्मिक**–जो आत्मा, शरीर में अविद्या, राग, द्वेष, काम, क्रोध, अज्ञानता और ज्वरपीड़ा आदि से होता है।

2. **आधिभौतिक दुःख**–जो एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को, एक प्राणी से दूसरे प्राणी को होना। शत्रु, व्याघ्र, सर्प आदि से।

3. **आधिदैविक**–दैवी आपत्ति, भूचाल, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, सूखा पड़ना आदि।

दैहिक दैविक भौतिक तापा।।

यह तीनों प्रकार की पीड़ा अशांति–दुःख की निवृत्ति होने पर ही सुख शान्ति की प्राप्ति हो सकती है।

आइए, शान्ति के लिए परमात्मा से प्रार्थना करें।

4–E कैलाश नगर
फाजिल्का

भोग और भाग का अनुपात

● नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'

प्रत्येक मनुष्य को अपने जीवन में जीवन–यापन करते समय अपने भोग और अपने लिए निर्धारित भाग के अनुपात का विशेष ध्यान रखना चाहिए। यदि हम अपने निर्धारित भाग से अधिक सुख सुविधाओं ऐश्वर्य का उपयोग उपभोग करते है तो निश्चित रूप से हम उस अधिक उपयोग के लिए दूसरों के ऋणी हो जाते हैं। सामान्य जीवन में अक्सर यह ऋण हमें कई बार दिखाई भी नहीं देता। भोग की अधिकता में ऋण दिखाई न देने का कारण कुछ तो हमारी अल्पज्ञता अबोधता है दूसरा उस ऋण को चुकाने के लिए उदासीनता या फिर नास्तिक चार्वाक के कथन पर आस्था **"ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्"** यानी उधार लो घी पियो और भूल जाओ।

अब इन पर एक–एक करके विचार करते हैं। किसी मित्र ने हमें जलेबी खिलाई तो हम पर हजारों व्यक्तियों का ऋण आ गया क्योंकि उस जलेबी के बनने में हजारों लोगों का हाथ है और चूंकि हमने उसका सेवन किया तो उन सभी का ऋण हम पर हो गया। सामान्य रूप से हमें इस बात का बोध हमारी अबोधता, अल्पज्ञता के कारण नहीं होता। जैसे जलेबी बनाने में गेहूँ किसान ने खेत में बोया–काटा, चक्की में पीसा, हलवाई ने प्रयोग किया। ऐसे ही चीनी बनने से पूर्व गन्ना बोना–काटना, मिल में चीनी का बनना, फिर प्रयुक्त ईंधन और कड़ाही के बनने में कितने ही लोगों का हाथ है। इस प्रकार जलेबी खाने से जाने अनजाने हजारों लोगों का ऋण हम पर आ गया।

यह तो हमारी अबोधता के कारण हुआ। पर कई बार हम इसके प्रति उदासीनता भी बरतते हैं। सुबह के समय सैर के लिए पार्क में गए। पेड़ों से प्राप्त आक्सीजन और पुष्पों की सुगंध को जी भर कर लंबे–लंबे श्वास लेकर ग्रहण किया। परन्तु स्वयं कभी पेड़ या पुष्प लगाकर उस ऋण से उऋण होने का प्रयास नहीं किया। धीरे–धीरे इन सामाजिक ऋणों के प्रति उदासीनता इतनी प्रबल होती चली गई कि हम नास्तिक चार्वाक के कथन पर चलने लगे–उधार लो, घी पियो और मौज करो।

परन्तु अपने भाग अर्थात् ईश्वरीय न्याय व्यवस्था के अन्तर्गत हमारे पूर्व के कर्मो के फलों के आधार पर निश्चित की गयी मात्रा से अधिक धन संपत्ति ऐश्वर्य सुखों के भोग से हम पर अनेक ऋण चढ़ जाते हैं। यह ऋण कर्म फल सिद्धांत के अर्न्तगत हमारे कष्टों, दुःखों का कारण बनते हैं। इन आगामी कष्टों, दुःखों से मुक्ति का मार्ग क्या है? इसके लिए हमें अपने भाग और भोग के अनुपात को ठीक रखना होगा। भाग और भोग के अनुपात को सही करने के लिए हमें अपने जीवन में भोगों को कम से कम केवल आवश्यकतानुसार रखना पड़ेगा। व्यर्थ संग्रह, भौतिक सुख साधनों का एकत्रीकरण हमारे भोगों को बढ़ाता है जो अंततः हमारे बंधनों और दुःख का कारण बनता है। इसलिए हमें जीवन में अपने भोगों को न्यूनतम अर्थात् अपनी व्यर्थ की इच्छाओं पर नियंत्रण और मन को अपने वश में रखना चाहिए ताकि भोग भाग से अधिक न हो सकें।

सामान्य विनिमय की दृष्टि से भी देखें तो यदि जेब में पैसा है तभी हम बिना उधार लिए वांछित वस्तु को खरीद सकते हैं। अर्थात् यदि हम क्रय शक्ति को बढ़ाना चाहते है तो हमारे पास जेब में अधिक धन होना चाहिए। इससे स्पष्ट हो जाता है कि हमें अपने भोग बढ़ाने से पूर्व अपना भाग बढ़ाना होगा। अपने भोगों का भाग बढ़ाने के लिए सरल सिद्धांत है कि हमें जीवन से सदा निष्काम भाव से परोपकार के यज्ञीय कार्य करने चाहिए। सर्वहितकारी परोपकार के कार्य करने से ईश्वरीय न्याय व्यवस्था के अंतर्गत अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् के सिद्धान्त से हमें उन यज्ञीय कार्यों का फल अच्छी किस्मत नियति या प्रारब्ध के भोगों के रूप में मिलता है और हमारा भाग स्वतः बढ़ जाता है।

वैसे भी मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज में मनुष्य अपनी अल्पज्ञता, अल्पशक्ति, एकदेशीयता के कारण अपने जीवन के कार्यों के लिए एक दूसरे पर निर्भर रहता है। यही समाज के अवयवों की एक दूसरे पर निर्भरता ही परस्परतंत्रता के सिद्धांत को जन्म देती है। अर्थात् सामान्य जीवन में जाने अनजाने ऋण लेते और ऋण देते रहते हैं। ऐसी स्थिति में वाणिज्य के सामान्य सिद्धांत का पालन करें कि मेरा लिया हुआ ऋण कभी दिए हुए ऋण से ज्यादा न होने पाए और हम जीवन में सदा लिए हुए ऋण अर्थात् दूसरों के अपने प्रति किए गए उपकार को स्मरण रखें और परोपकार के कार्यों से उन ऋणों से उऋण होने का प्रयास किया करें। हम सदा प्रयास करें और परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करें कि मेरे जीवन में मेरे भोग मेरे भाग से अधिक न हो जाए और हम सदा वेद के इस आदेश का पालन करें **"मा अहं अन्य कृतेन भोजम्"** अर्थात् मैं किसी दूसरे की कमाई न खाऊँ। मैं अपनी ही कमाई पर निर्भर रहूँ।

602 जी एच 53
सैक्टर 20 पंचकूला
मो. 09467608686
9878748899

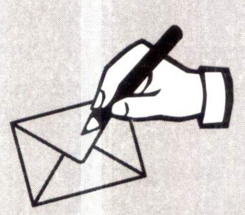

पत्र/कविता

ओ३म् नाम प्रभु का बड़ा, मानो बिसवे बीस

आर्यवर्त को लग गया, जड़ पूजा का रोग।
नर–नारी इस रोग का, भोग रहे हैं भोग।।
भोग रहे हैं भोग, समझते नहीं अनाड़ी।
पक्के हैं नादान, देश की दशा बिगाड़ी।।
अगर रहा यह छल, देश यह मिट जाएगा।
हमको फिर ना समझ, सकल जग बतलाएगा।।

कांबरियों का हो गया, भारत में अब ज़ोर।
कांबर लेकर आ रहे, जालिम डाकू–चोर।।
जालिम डाकू–चोर, लफंगे, नीच, शराबी।
मचा रहे उत्पात, कुकर्मी दुष्ट कबाबी।।
दया–धर्म को त्याग, पाप को पनपाते हैं।
बनते हैं शिव भक्त, तनिक ना शर्माते हैं।।

शिव ईश्वर का नाम है, गुण वाचक लो जान।
आर्यजनों का शिव सदा, करता है कल्याण।।
करता है कल्याण, सकल ऐश्वर्य दाता।
देवों का है देव, जगत का है निर्माता।।
कर्मों का फल यथा–योग्य, देना हे स्वामी।
पालन करता वही, मात–पितु–गुरु है नामी।।

सभी जगह मौजूद है, निराकार जगदीश।
ओ३म् नाम प्रभु का बड़ा, मानो बिसवे बीस।।
मानो बिसवे बीस, रात–दिन करो भलाई।
वैदिक धर्मी बनो, मार्ग है यह सुखदाई।।
मूर्ति में है जगदीश, मूर्ति में जीव नहीं है।
"न तस्य प्रतिमास्ति", वेद का वचन सही है।।

जागो! भोले साथियो, बुद्धि से लो तुम काम।
जुटो वेद प्रचार में, करदो जग में नाम।।
करदो जग में नाम, समय मत व्यर्थ गंवाओ।
मानव तन अनमोल, बावलो, लाभ उठाओ।।
परोपकारी शीलवन्त, गुणवान बनो तुम।
"नन्दलाल" भारत माता की शान बनो तुम।।

पं. नन्दलाल निर्भय सिद्धान्ताचार्य
आर्य सदन बहीन, जनपद पलवल (हरियाणा)
मो. 09813845774

अनैतिक धर्मांतरण पर रोक जरूरी

झारखंड की सरकार अपनी विधानसभा में एक ऐसा कानून ला रही है, जो धर्मांतरण के गलत तरीकों पर रोक लगा देगा। झारखंड जैसे प्रांत में तो ऐसा कानून अब से 70 साल पहले ही बन जाना चाहिए था, क्योंकि जिन प्रांतों में आदिवासियों की संख्या ज़्यादा है, गरीबी है, अशिक्षा है, असमानता है, वहीं ईसाई मिश्नरी अपना अड्डा जमा लेते हैं। वे लोगों को लालच देते हैं, शिक्षा और चिकित्सा की चूसनियाँ लटकाते हैं, उनकी शादियाँ करवाते हैं, उन्हें तरह–तरह की सुविधाएँ देते हैं और बदले में उनका धर्म छीन लेते हैं। उन्हें ईसाई बना लेते हैं।

यदि लोग बाइबिल पढ़कर और ईसा मसीह के महान चरित्र से प्रभावित होकर ईसाई बनें तो किसी को भी कोई एतराज क्यों हो लेकिन अपनी संख्या बढ़ाने के लिए पादरी लोग जो तिकड़में करते हैं, वे घोर अनैतिक होती हैं। वे ईसा के उपदेशों को शीर्षासन करवा देती हैं। यदि ईसा मसीह आज जिंदा हों और अपने चेलों के ये कारनामे उन्हें पता चलें तो वे अपना माथा ठोक लेंगे।

इन अनैतिक और अधार्मिक कार्यों पर रोक लगाने के लिए ही मप्र, उप्र, गुजरात, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, हिमाचल और ओडिशा में पहले से ही कानून बने हुए हैं। झारखंड में पिछले दस साल में ईसाइयों की जनसंख्या 30 प्रतिशत बढ़ गई है जबकि मुसलमानों की 29 और हिंदुओं की 21 प्रतिशत बढ़ी है। साढ़े तीन करोड़ की आबादी में वहाँ 27 प्रतिशत आदिवासी हैं। झारखंड में किसी व्यक्ति का धर्मांतरण लालच या डर दिखाकर करनेवाले को तीन साल की सजा और 50 हजार रु. जुर्माना होगा। यदि प्रभावित व्यक्ति कोई आदिवासी, अनुसूचित, महिला या अवयस्क हुआ तो यह सजा चार साल की होगी। जो स्वेच्छा से धर्मांतरण करना चाहे, उसे जिलाधिकारियों को पूर्व सूचना देनी होगी।

यह कानून इसलिए अच्छा है कि यह सब पर एक समान लागू होगा। कोई किसी को जबर्दस्ती या लालच देकर ईसाई से मुसलमान या हिंदू भी नहीं बना सकेगा। इसीलिए जो लोग इसका विरोध कर रहे हैं, उनकी दाल में कुछ काला है। जो लोग इस तरह के धर्मांतरण के पक्षधर हैं, वे अराष्ट्रीय भी हैं, क्योंकि उन्हें इस कुकर्म के लिए विदेशों से प्रचुर पैसा मिलता है। वे धनदाता राष्ट्रों के ज्यादा वफादार होते हैं।

वास्तव में भारतीय संसद को इस संबंध में कड़ा कानून बनाना चाहिए। यह धर्मांतरण पर नहीं, उसके गलत तरीकों पर रोक है।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक
Email- dr.vaidik@gmail.com

****

तब हम नहीं होंगे इसलिए हम कुछ नहीं करेंगे

"कोई कितना ही करे परन्तु जा स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।" महर्षि दयानन्द सरस्वती, संस्थापक आर्य समाज। स्वतन्त्रता का आह्वान सबसे पहले आपने ही किया था इसलिए स्वतन्त्र भारत में आपको राष्ट्रपिता माना जाना चाहिए था। स्वातन्त्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर ने कहा तर्क और प्रमाण देकर सिद्ध किया कि अखण्डित भारत स्वाभाविक रूप से हिन्दू राष्ट्र है।

मौहम्मद अली जिन्ना ने कहा हिन्दुओं को वीर सावरकर को अपना नेता मानना चाहिए और हिन्दू महासभा को अपनी राजनीतिक पार्टी। हिन्दुओं को सही बात पसन्द नहीं आई क्योंकि उनका बुरा समय चल रहा था और अभी भी चल रहा है इसीलिए कहते हैं कि विनाश काले विपरीत बुद्धि।

"आर्य समाजी कहते हैं कि देश को स्वतन्त्र कराने का मुख्य श्रेय उन्हे है क्योंकि कांग्रेस में 80 प्रतिशत आर्य समाजी थे"। कांग्रेस में 40 प्रतिशत ही आर्य समाजी थे शेष 40 प्रतिशत वे लोग थे जो आर्य समाज की विचारधारा और सोच को सही मानते थे। जब सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि राजनीति करने के लिए राजार्य सभा बनाई जाए तब यह ने राजार्य सभा क्यों नहीं बनाई? सत्यार्थ प्रकाश को पढ़कर उस पर अमल क्यों नहीं किया?

1908 में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली में पंजीकृत हुई। उसके पदाधिकारियों ने राजार्य सभा बनाकर आर्यों को कांग्रेस में जाने से क्यों नहीं रोका? और अभी भी गलती किए जा रहे हैं।

तुष्टीकरण की नीति पर चलने के कारण खण्डित भारत की दशा 1947 से भी ज्यादा खराब हो गई है जैसे कश्मीर में अशान्ति, नक्सलवाद, किसानों की समस्याएं, मंहगाई, गुण्डागर्दी, बलात्कार, गैंगरेप, लड़कियों, हिन्दुओं की घट रही संख्या और बेरोजगारी आदि। सत्यार्थ प्रकाश के प्रबल समर्थकों को चाहिए वे इन समस्याओं का समाधान के लिए कार्यक्रम दें।

अफगानिस्तान–पाकिस्तान–बांग्लादेश के अविभाजित भारत से अलग हो जाने के बाद खण्डित भारत का क्षेत्रफल लगभग 10 लाख वर्गमील है। अभी पाकिस्तान कश्मीर को तथा चीन अरुणाचल प्रदेश को छीनना चाहता है।

अदूरदर्शी विचारकों का अनुमान है कि 50 वर्षों के बाद देश की सत्ता हिन्दू के हाथों से निकल जाएगी। जब उनसे पूछा गया कि ऐसी स्थिति को रोकने के लिए आप क्या कर रहे हैं? उत्तर मिलता है कि तब हम नहीं होंगे इसलिए हम कुछ नहीं करेंगे।

इन्द्र देव गुलाठी
मो. 08958778443

****

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 16/17-08-2017

एस.एल. बावा डी.ए.वी. बटाला में नशा-निवारण जागरूकता संगोष्ठी का आयोजन

एस.एल. बावा डी.ए.वी. कॉलेज, बटाला में कॉलेज की आर्य समाज समिति के दिशा निर्देशन में 'ड्रग एबयूज़' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया। प्रो. डॉ. मंजुला उप्पल की देख रेख में 'सोसाइटी ऑफ बायोलॉजीकल साईंस' द्वारा आयोजित इस संगोष्ठी का उद्देश्य छात्रों को नशे के दुष्प्रभावों के प्रति जागरूक करना था। विभिन्न कक्षाओं के छात्रों ने नशे के कारण ों, प्रभावों सम्बन्धी अपने विचार प्रस्तुत किए।

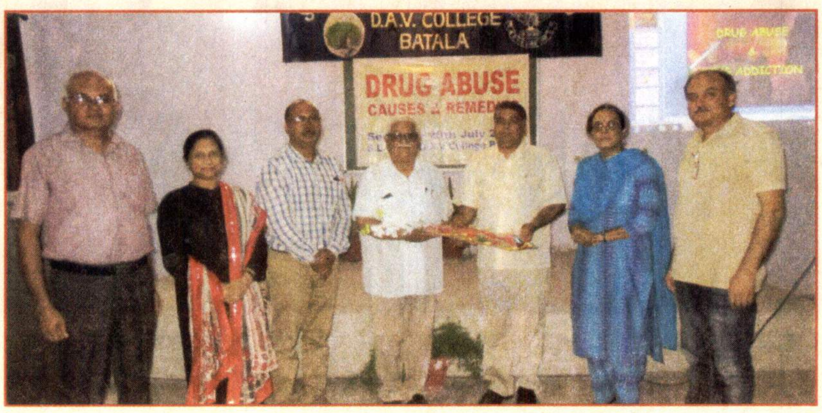

कार्यक्रम में विशेष रूप से आमंत्रित समाज सेवक एवं स्थानीय प्रबन्धकर्त्री समीति के सदस्य श्री कुलदीप राज जी ने छात्रों को सम्बोधित करते हुए कहा कि नशीले पदार्थों की बजाय देश की युवा पीढ़ी को ज्ञान प्राप्ति का, देशभक्ति के जुनून का नशा करना चाहिए जो समाज और देश का सुधार कर सके। उन्हें अपना ध्यान नशों से हटाकर देश की उन्नति में लगाना चाहिए।

वैज्ञानिक स्तर पर बात करते हुए प्रो. डॉ. मंजुला उप्पल ने पावर प्वाइंट प्रदर्शन द्वारा नशे के दुष्प्रभावों को और भी स्पष्ट करते हुए बताया कि नशा व्यक्ति की दिमागी क्रियाओं को प्रभावित करता है जिससे वह धीरे–धीरे अपना मानसिक संतुलन गंवा बैठता है और सोचने समझने की शक्ति खो देता है। उन्होंने नशीले पदार्थों के प्रकार, कारण, प्रभाव आदि पर विस्तार से चर्चा की। यह भी कहा कि नशे के आदी व्यक्ति को तिरस्कृत करने की बजाय उन्हें सही उपचार द्वारा इससे छुटकारा पाने में सहयोग दें।

कम्प्यूटर विभाग से प्रो. सुखविन्द्र सिंह ने छात्रों को एक लघु फिल्म दिखाई जिसमें अभिभावकों के लिए यह संदेश था कि वे बच्चों को अच्छे संस्कार दें तथा धर्म के साथ जोड़े रखें।

प्रधानाचार्य डॉ. वीरेन्द्र भाटिया ने छात्रों को सम्बोधित करते हुए कहा कि नशे के कहर ने सामाजिक व्यवस्था को झंझोड़ दिया है। देश का अनमोल मानव संसाधन लोक कल्याण के कार्य करने की बजाय नशों में डूब रहा है। इसका एक बड़ा कारण बेरोज़गारी भी है। अपनी असफलताओं के कारण निराश युवा पीढ़ी नशों का सहारा लेती है जिससे समाज में अपराधों को भी बढ़ावा मिलता है। इससे बचने के लिए नौजवानों को हमेशा सचेत और जागरूक रहना होगा। प्रो. राजीव मेहता, प्रो. मुनीष यादव, किरण बाला, प्रो. संजीव कौशल, प्रो. पवन मलिक आदि स्टॉफ सदस्य तथा भारी संख्या में छात्र इस अवसर पर उपस्थित रहे।

डी.ए.वी. साहिबाबाद में कारगिल विजय दिवस पर हुआ विशेष कार्यक्रम

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, साहिबाबाद ने कारगिल विजय दिवस पर क्रांतिवीरों को स्मृति–प्रसूनों की भाव–भीनी श्रद्धांजलि समर्पित करते हुए विद्यालय प्रागंण में अनेक कार्यक्रम आयोजित किए। इस अवसर पर विद्यालय की प्राइमरी कक्षाओं में देशप्रेम, देशभक्ति पर कविता वाचन एवं शहीदों के बलिदानों का स्मरण किया गया। कक्षा सातवीं एवं आठवीं के विद्यार्थियों द्वारा देश के सेनानियों और उनके समर्पण पर आकर्षक एवं सजीव नाटक प्रस्तुत किया गया जिसने दर्शकों को मंत्र–मुग्ध कर दिया। कक्षा नवीं एवं दसवीं के विद्यार्थियों के लिए डिसप्ले बोर्ड सज्जा प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें विद्यार्थियों ने उत्साह पूर्वक भाग लेते हुए **'जरा याद करो कुर्बानी'** विषय पर उद्गार व्यक्त करते हुए अपनी–अपनी कक्षा का डिस्प्ले बोर्ड अलंकृत किया। निर्णायक मंडल द्वारा क्रमशः प्रथम एवं द्वितीय स्थान प्रदान किए गए इसके अतिरिक्त प्रोत्साहन पुरस्कारों की घोषणा भी की गई।

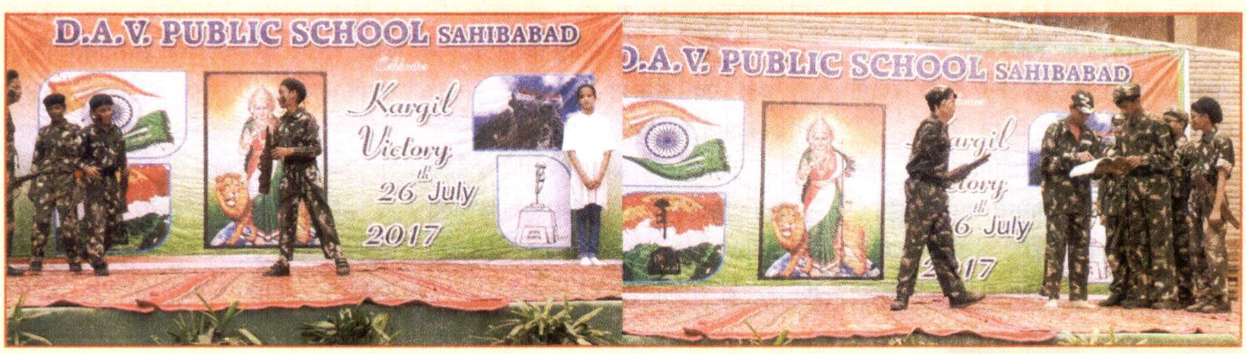

प्रधानाचार्य श्री वी.के. चोपड़ा ने देश हित में अपना सर्वस्व बलिदान कर देने वाले क्रांतिवीरों एवं शहीदों को नमन किया तथा अपने संबोधन में कहा कि हमें देश की सेना और उनके त्याग को कभी नहीं भूलना चाहिए। उन्होंने कहा कि विद्यालय के आर्यवीरों में देश प्रेम की भावना को देखकर यह स्पष्ट है कि हमारे विद्यार्थी स्वामी दयानन्द, महात्मा हंसराज जैसे महानायकों की विरासत का संवर्धन कर रहे हैं, जिन्होंने देश हित में अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया। आर्य युवा शक्ति को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि देश का भविष्य सुरिक्षत हाथों में है उन्होंने विद्यार्थियों से देश सेवा का संकल्प लेने का आग्रह किया।

मतदान के प्रति जागरूकता के लिए करवाए गए मुकाबले

आदरणीय जिला चुनाव अफसर कम डिप्टी कमीश्नर श्री मुक्तसर साहिब के आदेशों की पालना करते हुए जगेनाथ जैन डी.ए.वी. सै. पब्लिक स्कूल, गिदड़बाहा की मुख्याध्यापिका श्रीमती मोनिका खन्ना के नेतृत्व में स्कूल के विद्यार्थियों को जिम्मेदार नागरिक बनाने के लिए और मतदान के प्रति उनमें जागरूकता लाने के लिए स्कूल में भाषण प्रतियोगिता, स्लोगन लेखन और चार्ट मेंकिंग मुकाबले करवाए गए। इस मुकाबले में सातवीं, ग्यारहवीं और बारहवीं कक्षा के विद्यार्थियों ने भाग लिया।

पोस्टर बनाने में हरमनजोत, गुरजोत कौर, करणवीर सिंह ने संयुक्त रूप में पहला स्थान, स्लोगन लिखने में स्नेहा गर्ग, इंशात गोयल और नवदीप सिंह सातवीं कक्षा ने संयुक्त रूप में पहला स्थान प्राप्त किया। इसी के साथ मीनाक्षी, आजमप्रीत और खुशदीप ने प्रतियोगिता में संयुक्त रूप में पहला स्थान प्राप्त किया।

प्रधानाचार्य श्रीमती मोनिका खन्ना ने सभी विद्यार्थियों को बधाई देते हुए विद्यार्थियों और अध्यापकों की प्रशंसा की। स्कूल के चेयरमैन श्री रघुवीर सिंह जी, रिजनल डायरैक्टर, श्रीमती नीलम कामरा और मैनेजर डॉ. सतवंत कौर भुल्लर ने भी बच्चों को बधाई भेजी ओर आगे भी ऐसे ही जिम्मेदार नागरिक बने रहने की प्रेरणा दी।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**

डी.ए.वी. समाना ने वीर शहीदों को दी श्रद्धांजलि

डी.ए.वी. स्कूल समाना में स्वतंत्रता दिवस के उपलक्ष्य पर एक भव्य समारोह का आयोजन किया गया। इस समारोह में कक्षा सातवीं से दसवीं तक के बच्चों ने बड़े उत्साह के साथ भाग लिया। बच्चों ने पूरे विद्यालय परिसर की तीन रंगों से सजाया और देशभक्ति से पूर्ण भिन्न–भिन्न प्रकार के नृत्य, गीत और लघु नाटक भी प्रस्तुत किये गए। सारे प्रांगण में मानो देशभक्ति की लहर चल रही हो। इस रंगारंग गीत संगीत के साथ ही बच्चों ने सामाजिक बुराइयों का विरोध करते हुए कई नाटक व नुक्कड़ नाटक भी प्रस्तुत किये उनमें से कुछ विशेष थे जल संरक्षण, प्रदूषण रहित दीवाली आदि।

प्रधानाचार्य डॉ मोहन लाल शर्मा ने सभी बच्चों के उत्साह और लगन की सराहना करते हुए सभी को स्वतंत्रता दिवस की शुभ कामनाएँ दीं। उन्होंने कहा कि हर व्यक्ति में अपने देश के प्रति वास्तविक जुनून होना चाहिए, ऐसी भावनाएँ केवल राष्ट्रीय पर्वों पर ही नहीं बल्कि हमें सदा ही अपनी मातृभूमि के प्रति नत–मस्तक होना चाहिए तथा एक श्रेष्ठ नागरिक होने का कर्तव्य निभाना चाहिए।

आर्य समाज, दयानन्द मार्ग, अलवर में श्री छोटू सिंह आर्य का 97वाँ जन्मदिवस मनाया गया

अलवर में स्वतंत्रता सेनानी श्री छोटूसिंह आर्य के 97वें जन्म दिवस के अवसर पर आर्य समाज, स्वामी दयानंद मार्ग, अलवर के तत्वाधान में जन सहयोग से व चार दिवसीय कार्यक्रम आयोजित किये गये।

उच्च माध्यमिक विद्यालयों की "षष्ठम् रंगोली प्रतियोगिता आर्य बा.उ.मा.वि. स्वामी दयानन्द मार्ग, अलवर में हुई।

"षष्ठम् निबन्ध प्रतियोगिता आर्य आर्य बा.उ.मा.वि. स्वामी दयानन्द मार्ग में हुई।

आर्य समाज स्वामी दयानन्द मार्ग, अलवर में 92वाँ तथा 93वाँ निःशुल्क चिकित्सा एव जाँच शिविर लगाया गया जिसमें डॉ. देशबधु गुप्ता, मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी, डॉ. डी.सी. शर्मा, जिला मातृ शिशु एवं स्वास्थ्य अधिकारी (से.नि.), डॉ बी.एल सैनी होम्योपेथी एवं वैद्य भगवान दास मित्तल जिला आयुर्वेद अधिकारी (से.नि.) ने अपनी निःशुल्क सेवाएँ प्रदान की।

'यज्ञ एवं सम्मान समारोह' में श्री धर्मपाल आर्य, संरक्षक, आर्य समाज बजाजा बाजार, अलवर को 'आर्य शिरोमणि' उपाधि से तथा प्रतियोगिताओं में श्रेष्ठ रही छात्राओं को शारदा देवी छोटू सिंह आर्य चैरिटेबल की ओर से सम्मानित किया गया।

आर्य बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय, स्वामी दयानन्द मार्ग में आर्य कन्या विद्यालय समिति द्वारा संचालित समस्त विद्यालयों प्रतिभाशाली सर्वश्रेष्ठ छात्राओं को शारदा देवी छोटू सिंह आर्य चैरिटेबल ट्रस्ट व स्व प्र विद्या वाचस्पति मैमोरियल ट्रस्ट दिल्ली द्वारा दशम् पुरस्कार में सम्मानित किया गया। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि प्रिन्सीपल कमिश्नर इंकमटैक्स, देहली, श्रीमती सुखविन्दर खन्ना थे।

छोटू सिंह आर्य षष्ठम् क्रॉस कन्ट्री दौड़ के गेस्ट ऑफ ऑनर श्री ए.के. शर्मा रजिस्टार, महात्मा गांधी कॉलेज, जयपुर

रहे तथा मुख्य अतिथि श्री यशपाल त्रिपाठी–आर पी एस. कमाण्डेन्ट राजस्थान पुलिस प्रशिक्षण केन्द्र एवं श्री टी आर मीणा (से.नि.) कमिश्नर इनकम टैक्स थे।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

आर्य समाज पुतलीघर ...

माडल टाउन के प्रधान श्री देशबन्धु, आर्य समाज लारेन्स रोड के प्रधान श्री अरुण महाजन, आर्य समाज जन्डियालागुरु के मन्त्री स्वतन्त्र कुमार , आर्य समाज हरीपुरा के प्रधान श्री दीनानाथ आर्य समाज मेहरपुरा के एवं छोटा हरीपुरा के प्रधान एवं सदस्य आर्य युवक सभा के मन्त्री श्री दिनेश आर्य, जितेन्द्र मल्होत्रा तथा बाजार श्रद्धानन्द आर्य समाज तथा आर्य समाज पुतलीघर के सदस्यों ने उत्साह पूर्वक भाग लिया।

लंगर का वितरण श्री महेन्द्र कान्त, श्री रघुबीर, श्री धर्मवीर, सीकरी एवं यश पाल गुप्ता द्वारा किया गया।

कार्यक्रम में विशेष तौर पर दिल्ली से श्री अशोक महत्ता के परम मित्र श्री वेद भल्ला, जालन्धर से श्री कमल किशोर, उन के सुपुत्र तथा प्रधान श्री राजकुमार जी सम्मलित हुए श्री कुलदीप शर्मा की भजन प्रस्तुति अति सराहनीय रही।

शान्ति पाठ के उपरान्त अल्पाहार का वितरण किया गया।

मन्च संचालन पं. मुरारीलाल आर्य ने किया।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

तरुण क्रान्तिकारी मदनलाल...

सजा दी गई थी। इनमें से 'अरविन्दो घोष' वस्तुतः प्रसिद्ध योगीराज अरविन्द थे जिनके छोटे भाई बरीन्द्र कुमार घोष थे।

इस परिदृश्य के सन्दर्भ में मदनलाल धींगरा द्वारा लन्दन में कर्जन वाइली की हत्या और उनके बलिदान को देखना चाहिए जिसके कारण अंग्रेज़ों को अपने प्रचार में महात्मा गांधी की भूमिका बड़ी महत्वपूर्ण दिखी। मदनलाल धींगरा द्वारा की गई हत्या की भर्त्सना में गांधी जी का वक्तव्य जो अभिलेखित है वह हमारी आँख खोल सकता है।

महात्मा गांधी के अनुसार सर कर्जन वाईली की हत्या के पक्ष में अंग्रेज़ों को भारत के विनाश और पतन के लिए उन्हें जिस तरह ज़िम्मेदार कहा गया है वह गलत है। इस हत्या के बचाव में कुछ भी नहीं कहा जा सकता, सिवाय इस बात के कि इसने भारत की छवि बिगाड़ने के साथ हमारे प्रतिनिधित्व की पारदर्शिता को धक्का पहुँचाया है। मेरे विचार में धींगरा का यह कृत्य एक अक्षम्य, अराजकता वादी अपराध नहीं था।

ए–1002 पंचशील हाईटस
महावीर नगर, कान्दिवली (प.)
मुम्बई – 400067

चलो नाव को ले चलें खे के वहीं

मुझे वेद पुराण कुरान से क्या,
मुझे सत्य का पाठ पढ़ा दे कोई!
मुझे मंदिर मस्जिद जाना नहीं,
मुझे प्रेम का रंग चढ़ा दे कोई!
जहाँ ऊँच या नीच का भेद नहीं,
जहाँ जात या पात की बात नहीं,
न हो मंदिर, मस्जिद, चर्च जहाँ,
न हो पूजा नमाज में फर्क कहीं
जहाँ सत्य ही सार हो जीवन का,
और साजो सिंगार हो त्याग जहाँ,
जहाँ प्रेम ही प्रेम की सृष्टि मिले,
चलो नाव को ले चलें खे के वहीं।

कृष्ण मोहन गोयल
113–बाजार कोट अमरोहा–24422
मो. 9927064104